THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_176986
UNIVERSAL
LIBRARY

सरस्वती-सिरीज़ नं० ६९

हिंदी के निर्माता (भाग १)

रायबहादुर बाबू श्यामसुंदरदास
बी० ए०

सर्वोदय साहित्य मन्दिर
हुसैनीअलम रोड, हैदराबाद (दक्षिण)

प्रकाशक
इंडियन प्रेस लिमिटेड
प्रयाग

सरस्वती-सिरीज़

स्थायी परामर्शदाता—डा० भगवानदास, पण्डित अमरनाथ झा, भाई परमानंद, डा० प्राणनाथ विद्यालङ्कार, श्री सत्यदेव विद्यालङ्कार, पं० द्वारिका-प्रसाद मिश्र, संत निहालसिंह, प० लक्ष्मणनारायण गर्दे, बाबू संपूर्णानन्द, श्री बाबूराव विष्णुपराड़कर, पण्डित केदारनाथ भट्ट, ब्यौहार राजेन्द्रसिंह, श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख़्शी, श्री जैनेन्द्रकुमार, बाबू वृन्दावनलाल वर्मा, सेठ गोविन्ददास, पण्डित योगेश चटर्जी, डा० ईश्वरीप्रसाद, डा० रमाशंकर त्रिपाठी, डा० परमात्माशरण, डा० बेनीप्रसाद, डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, पण्डित रामनारायण मिश्र, श्री संतराम, पण्डित रामचन्द्र शर्मा, श्री महेश-प्रसाद मौलवी फ़ाज़िल, श्री रायकृष्णदास, बाबू गोपालराम गहमरी, श्री उपेन्द्र-नाथ "अश्क", डा० ताराचंद, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालङ्कार, डा० गोरखप्रसाद, डा० सत्यप्रकाश, श्री अनुकूलचन्द्र मुकर्जी, रायबहादुर पण्डित श्रीनारा-यण चतुर्वेदी, रायबहादुर डा० श्यामसुन्दरदास, पण्डित सुमित्रानन्दन पंत, पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पण्डित मोहनलाल महतो, श्रीमती महादेवी वर्मा, पण्डित अयोध्या-सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, डा० धीरेन्द्र वर्मा, बाबू रामचन्द्र टंडन, पण्डित केशवप्रसाद मिश्र, बाबू कालिदास कपूर, इत्यादि, इत्यादि।

हिन्दी-साहित्य

हिन्दी के निर्माता (भाग २)

193[illegible] के वर्तमान विद्वानों और सुलेखकों का

सचित्र परिचय

रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०

Printed and Published by K. Mittra at the Indian Press Ltd. Allahabad.

निवेदन

जिस समय मुझसे कहा गया था कि दो भागों में ऐसी पुस्तक तैयार कर दो जिसमें हिंदी-साहित्य के निर्माताओं का वर्णन हो, उस समय पुस्तक के आकारादि के विषय में भी मुझे सूचनाएं मिली थीं। उन्हीं के अनुसार मैंने यह निर्णय किया कि एक भाग में दिवंगत वर्तमान युग के ५१ निर्माताओं का वर्णन हो और दूसरे भाग में वर्तमान ५१ निर्माताओं का उल्लेख हो। इस निर्णय के अनुसार पहला भाग सन् १९४१ के आरंभ में प्रकाशित हुआ और दूसरा भाग यह उपस्थित किया जाता है। प्रत्येक भाग में ५१ निर्माताओं का वर्णन होने से मुझे अवश्य कुछ नाम छोड़ने पड़े हैं। यह अनिवार्य था और इसके लिये मुझे खेद है। आशा है, प्रकाशक महाशय इस पुस्तक के और भाग प्रकाशित करके दिवंगत तथा वर्तमान निर्माताओं में छुटे हुए महाशयों का वर्णन देकर इस अभाव की पूर्ति करेंगे।

किसी भव्य भवन के निर्माण में सबसे पहला और महत्त्व का स्थान उस इंजीनियर का होता है जो अपने मन में उस भवन की रूप-रेखा निश्चित करके उसके बाह्य रूप को उसके अनुसार बनाने का आयोजन करता है। इसके अनुसार अन्य कारीगर तथा मजदूर लग कर उस भवन का निर्माण करते और उसे भव्य रूप देते हैं। इस प्रकार मातृभाषा हिंदी के प्रासाद-निर्माण में सब प्रकार के कारीगरों तथा कलाकारों की आवश्यकता होती है। कोई नींव खोदता है, तो कोई ईंटें थापता तथा पत्थर गढ़ता है, कोई गारा सानता है तो कोई सब सामग्री को यथास्थान ढोकर ले जाता है। इस प्रकार अनेक लोगों के सहयोग और सम्मिलित परिश्रम से यह

प्रासाद प्रस्तुत होता है। इस पुस्तक में जिन ५१ व्यक्तियों का उल्लेख है उनमें कवि, नाटककार, उपन्यासकार, कहानी-लेखक, निबंध-लेखक, समीक्षक, अनुवादक तथा आकर ग्रंथों के निर्माता है। इनमें सबका स्थान अपने अपने वर्ग में आदरणीय है। उसमें किसी को ऊँचा और किसी को नीचा बनाने की इच्छा को प्राबल्य न देने की कामना से मैंने इन ५१ महाशयों को उनके जन्म-संवत् के क्रम से श्रेणीबद्ध किया है। मुझे इस बात का बड़ा संतोष और आनंद है कि इस माला में कई ऐसे कलाकारों का चरित्र है जिनकी आयु ६० वर्ष से अधिक है और जो अभी तक अपने सतत उद्योग से मातृमंदिर की शोभा बढ़ाते जाते हैं। साथ ही इनमें वे युवक कलाकार भी वर्तमान हैं जो अपने उत्साह और उद्योग से माता की सेवा में रत हैं और जिनसे भविष्य में बहुत कुछ आशा की जाती है।

इस पुस्तक के निर्माण में मुझे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है, चित्रों और चरित्रों के प्राप्त करने में विशेष कष्ट उठाना पड़ा है। यह सब होने पर भी जैसा मैं चाहता था वैसा रूप इसे देने में असमर्थ रहा। फिर भी जो कुछ सामग्री मैं येन केन प्रकारेण जुटा सका उसे मैंने यथेष्ट रूप देने का प्रयत्न किया है। इसमें मुझे कहाँ तक सफलता मिली है यह दूसरों के कहने की बात है। यदि किसी चरित्र में कोई बात छूट गई है अथवा कहीं भ्रमवश या अज्ञान के कारण उलट-फेर हो गया है तो उसके लिये मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

१२. ११. १९४१ } श्यामसुंदरदास

निर्माताओं की सूची

		जन्म-सं०	पृष्ठ
१	महामहोपाध्याय रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'	१९१६	५
२	रायबहादुर महामहोपाध्याय डाक्टर गौरीशंकर हीराचंद ओझा ...	१९२०	७
३	पुरोहित हरिनारायण शर्मा, बी० ए०, विद्याभूषण	१९२१	११
४	पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	१९२२	१३
५	बाबू गोपालराम गहमरी ...	१९२३	१६
६	सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ...	१९२८	२१
७	रावराजा रायबहादुर डाक्टर श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०, डी० लिट्० ...	१९३०	२३
८	बाबू व्रजनंदनसहाय बी० ए०, 'व्रजवल्लभ'	१९३१	२६
९	पंडित कामताप्रसाद गुरु ...	१९३२	२९
१०	रायबहादुर पंडित सुखदेवबिहारी मिश्र बी० ए०	१९३५	३३
११	बाबू हरिकृष्ण 'जौहर' ...	१९३७	३६
१२	पंडित अंबिकाप्रसाद वाजपेयी ...	१९३७	४०
१३	पंडित गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ...	१९४०	४४
१४	पंडित बाबूराव विष्णु पराड़कर ...	१९४०	४७
१५	पंडित रूपनारायण पांडेय ...	१९४१	५०
१६	बाबू मैथिलीशरण गुप्त ...	१९४३	५३
१७	पंडित लोचनप्रसाद पांडेय ...	१९४३	५५
१८	श्री संतराम बी० ए० ...	१९४३	५७
१९	पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी ...	१९४४	६२

		जन्म-सं०	पृष्ठ
२०	बाबू गुलाबराय, एम० ए०, एल्-एल० बी०	१६४४	६४
२१	पंडित माखनलाल चतुर्वेदी ...	१९४५	६६
२२	बाबू रामचंद्र वर्म्मा ...	१६४६	६८
२३	पंडित लक्ष्मण नारायण गर्दे ...	१६४६	७२
२४	पंडित रामनरेश त्रिपाठी ...	१६४६	७५
२५	पंडित विश्वेश्वरनाथ रेउ साहित्याचार्य	१६४७	७६
२६	पंडित कृष्णबिहारी मिश्र बी० ए०, एल्-एल० बी०	१६४७	८२
२७	बाबू ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल्-एल० बी०	१६४७	८४
२८	बाबू वृंदावनलाल वर्मा बी० ए०, एल्-एल० बी०	१६४७	८६
२९	पंडित विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'	१६४८	८८
३०	ठाकुर गोपालशरणसिंह ...	१६४८	६०
३१	राय कृष्णदास ...	१६४६	६३
३२	बाबू शिवपूजनसहाय ...	१६५०	६५
३३	बाबू सियारामशरण गुप्त ...	१६५२	६८
३४	बाबू कृष्णदेवप्रसाद गौड़ एम० ए०, बी० टी०	१६५२	९९
३५	पंडित जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी'	१९५२	१०१
३६	पंडित हरिप्रसाद द्विवेदी (वियोगी हरि)	१६५३	१०३
३७	पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ...	१६५३	१०६
३८	डाक्टर धीरेंद्र वर्मा, एम० ए०, डी० लिट० (पेरिस) ...	१६५४	१०८
३९	पंडित उदयशंकर भट्ट ...	१९५४	१११
४०	पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ...	१६५४	११४
४१	बाबू सत्यजीवन वर्मा एम० ए० ...	१९५५	११६
४२	पंडित भगवतीप्रसाद वाजपेयी ...	१६५६	११६
४३	पंडित सुमित्रानंदन पंत ...	१९५७	१२१
४४	पंडित गांगेय नरोत्तम शास्त्री ...	१९५७	१२३

		जन्म-सं०	पृष्ठ
४५	डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०, एल्-एल० बी०, डी० लिट्० ...	१९५८	१२७
४६	पंडित इलाचंद जोशी ...	१९५९	१२९
४७	बाबू भगवतीचरण वर्मा ...	१९६०	१३१
४८	श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान ...	१९६१	१३२
४९	डा० रामकुमार वर्मा एम० ए०, पी-एच० डी०	१९६२	१३४
५०	पंडित नंददुलारे वाजपेयी एम० ए०	१९६३	१३७
५१	श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए० ...	१९६४	१४१

——

रायबहादुर जगन्नाथ-
प्रसाद 'भानु'

रायबहादुर पंडित
गौरीशंकर हीराचन्द
ओझा

पुरोहित हरिनारायण जी
बी० ए०

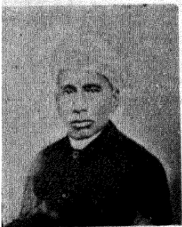

सेठ कन्हैयालाल
पोद्दार

बाबू गोपालराम
गहमरी

पंडित अयोध्यासिंह
उपाध्याय

रावराजा पंडित
श्यामबिहारी मिश्र

पंडित कामताप्रसाद गुरु

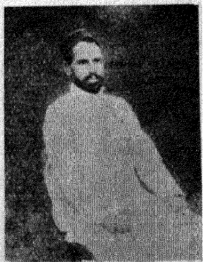

बाबू व्रजनन्दनसहाय
बी० ए०

(१) महामहोपाध्याय रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

आपका जन्म श्रावण शुक्ल १० सं० १९१६ (८ अगस्त सन् १८५९) को नागपुर में हुआ। आपके पिता बख्शीरामजी सरकारी फौज में नौकर थे। वे बड़े काव्यानुरागी थे। उनका बनाया हुआ हनुमन्नाटक काव्यग्रंथ बड़ा लोकप्रिय है। भानुजी को बहुत थोड़े दिनों तक स्कूली शिक्षा मिली थी, किंतु आपने सतत स्वाध्याय द्वारा अपना ज्ञानभांडार बहुत बढ़ा लिया। शनैः शनैः आप संस्कृत, हिंदी, अँगरेजी, उर्दू, उड़िया तथा मराठी आदि भाषाओं के पंडित हो गए। उर्दू में भी आपने काव्यग्रंथ लिखे हैं।

आप पहले-पहल १५) रु० मासिक पर शिक्षा-विभाग में नौकर हुए थे, किन्तु अपनी योग्यता के कारण उत्तरोत्तर वृद्धि करते-करते विलासपुर जिले में ६५०) रु० मासिक पर सेटेलमेंट आफिसर हो गए।

आपने पिंगलशास्त्र का विशेष अध्ययन किया है। छंदः-प्रभाकर आपका एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। अन्य लक्षण-ग्रंथों की भाँति इस ग्रंथ के उदाहरण नायक-नायिका-विषयक नहीं हैं, वरन् राम-कृष्ण-गुण-गान-पूर्ण और सरल हैं। सन् १९१४ में आपको साहित्याचार्य की उपाधि मिली और सन् १९३८ में हिंदी-साहित्य-सम्मेलन ने शिमला की बैठक में आपको साहित्यवाचस्पति की उपाधि प्रदान की। आप गणित विषय के भी पंडित हैं। कानपुर के हिंदी-साहित्य-मंडल ने सन् १९२५ में आपको जो अभिनंदन-

पत्र दिया था, उसमें आपको गणिताचार्य के नाम से संबोधित किया था। आपकी पुस्तकें कई शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्यक्रम में रखी गई हैं।

सरकारी नौकरी करते समय आप बहुत लोकप्रिय हो गए थे; क्योंकि दीन-दुखियों का बहुत ध्यान रखते थे। सन् १९१३ ई० में पेंशन लेने के अनंतर आपने लगभग १० हजार रुपए एकत्र करके विलासपुर में सहकारी बैंक (Co-operative Bank) की स्थापना की, जिसका आज बहुत बृहत् रूप हो गया है। सन् १६२० में आपको राय साहब तथा सन् १९२५ में रायबहादुर की उपाधि मिली। सन् १९४० में आप महामहोपाध्याय बनाए गए। आपकी रचित पुस्तकें ये हैं:—

साहित्यिक—१ काव्यप्रभाकर, २ छंदःप्रभाकर, ३ छंद-सारावली, ४ अलंकारदर्पण, ५ हिंदी-काव्यालंकार, ६ अलंकार-प्रश्नोत्तरी, ७ रसरत्नाकर, ८ काव्यप्रबंध, ९ काव्य कुसुमांजलि, १० नायिकाभेद शंकावली, ११ नव पंचामृत रामायण, १२ श्री तुलसीतत्त्वप्रकाश, १३ श्री तुलसीभावप्रकाश।

गणित—१४ कालविज्ञान, १५ अंकविलास, १६ कालप्रबोध, १७ ग्रहणदर्पण।

अँगरेजी—१८ Key to Perpetual, १९ Key to Perpetual Calendar B. C. Calendar A. D., २० Combination Permutation figures.

उर्दू—२१ गुलजारे सखुन, २२ गुलजारे फैज।

भजन—२३ तुम्हीं तो हो, २४ जयहरि चालीसा, २५ शीतला माता भजनावली।

इसके अतिरिक्त आपने महाकोशल प्रांत की मातृभाषा छत्तीस-गढ़ी में भी वहाँवालों के मनोविनोद के लिये कई पुस्तकें लिखी हैं।

आजकल आप मध्यप्रांतीय लिटरेरी एकेडेमी के प्रमुख सदस्य हैं। बिलासपुर में ही रहकर आप अपना अधिक समय भगवद्भजन और संत-समागम में बिताते हैं। आपका इष्ट ग्रंथ रामायण है। आपको अभिमान छू भी नहीं गया। साधारण से साधारण व्यक्ति से भी बड़े प्रेम से मिलते हैं और साधुओं तथा साहित्यिकों की यथाशक्ति सेवा करने में तत्पर रहते हैं।

साहित्य-जगत् में भानुजी की कीर्ति छंदःप्रभाकर और काव्य-प्रभाकर पर अवलंबित है। ये दोनों ग्रंथ लोकमान्य और सर्वप्रिय हुए, विशेषकर पहला। हिंदी-कविता का कोई विद्यार्थी इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता। जब आप काशी में आए थे, तो कवियों का एक समाज जुटा था, जिसमें आपकी प्रतिभा और कवित्व-शक्ति को देखकर लोगों ने कहा था कि आप तो हिंदी-कविता के भानु हैं। तभी से आपका उपनाम 'भानु' हो गया। अब तक महामहोपाध्याय की पदवी संस्कृत के विद्वान् ब्राह्मणों को मिलती थी, पर अब इस नियम का उल्लंघन होकर इतर जातियों और हिंदी भाषा के विद्वानों को भी इससे विभूषित किया जाता है। इस नियम का विस्तार सर्वथा वांछनीय और ग्राह्य है।

---

(२) रा० ब० म० म० डा० गौरीशंकर हीराचंद ओझा

हिंदी के इतिहास-मर्मज्ञ विद्वानों में पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा का आसन बहुत ऊँचा है। इन्होंने हिंदी की सेवा के उद्देश्य से जो ऐतिहासिक पुस्तकें लिखी हैं, उन सब की बड़े बड़े विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है।

इनके पूर्वज मेवाड़ के रहनेवाले थे। कोई २५० वर्ष हुए होंगे कि वे लोग सिरोही राज्यांतर्गत रोहिड़ा ग्राम में जा बसे। यहां

१५ सितंबर सन् १८६३ (सं० १९२०) में ओझाजी का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम हीराचंद और दादा का पीतांबर था। ये जाति के सहस्र औदीच्य ब्राह्मण हैं। सात वर्ष की अवस्था में इन्होंने एक पाठशाला में पढ़ना आरंभ किया। दो वर्ष तक हिंदी पढ़ते रहे। अनंतर नौ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत संस्कार होने पर वेदाध्ययन आरंभ किया। चार वर्ष में सम्पूर्ण शुक्ल यजुर्वेदीय संहिता कंठाग्र करके गणित पढ़ना प्रारंभ किया। पर किसी उपयुक्त गुरु के न मिलने से ओझा जी १४ वर्ष की अवस्था में बंबई चले गए और वहाँ पहले ६ महीने तक गुजराती भाषा सीखते रहे। अनंतर एल्फिस्टन हाईस्कूल में भरती होकर सन् १८८४ में इन्होंने मैट्रीकुलेशन परीक्षा पास की। इसके साथ ही साथ प्रसिद्ध पंडित गट्टूलालजी के यहाँ संस्कृत और प्राकृत पढ़ते रहे। सन् १८८६ में विलसन कालेज में इन्होंने प्रीवियस परीक्षा की पढ़ाई प्रारंभ की। पर शरीर की अस्वस्थता के कारण परीक्षा के पूर्व ही अपने ग्राम को लौट आए। फिर कुछ काल के पीछे बंबई जाकर प्राचीन लिपियों के पढ़ने और प्राचीन इतिहास के अध्ययन में इन्होंने अपना दो वर्ष का समय लगाया। सन् १८८८ में जब ये अपनी बहिन से मिलने उदयपुर आए तो महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदान जी ने इनके गुणों से प्रसन्न होकर इन्हें अपने इतिहास कार्यालय का मंत्री नियत किया। सन् १८९० ई० में विक्टोरिया हाल खुलने पर ये वहाँ की म्यूजियम लाइब्रेरी के अध्यक्ष नियत हुए और फिर अजमेर में जो नया सरकारी म्यूजियम खुला, उसकी अध्यक्षता का कार्य करने लगे। उस पद से आपने अब अवसर ग्रहण कर लिया है।

सन् १८९३ में इन्होंने हिंदी में एक अपूर्व ग्रंथ लिखा। प्राचीन इतिहास के उद्धार के लिये प्राचीन लिपियों का पढ़ना बड़ा

आवश्यक है परंतु इस काम के लिये किसी देशी भाषा में कोई पुस्तक न थी। पंडितजी ने प्राचीन लिपिमाला नाम का पुस्तक लिखकर इस अभाव की पूर्ति की। इस पुस्तक की बड़े बड़े विद्वानों तथा सोसाइटियों ने असाधारण प्रशंसा की। सन् १९१८ में इसका परिवर्द्धित और परिमार्जित संस्करण प्रकाशित हुआ। सन् १९०२ में इन्होंने कर्नल टाड का जीवनचरित्र लिखा और टाड साहब लिखित राजस्थान के अनुवाद पर टिप्पणी लिखना प्रारंभ किया। यह दूसरा ग्रंथ समाप्त न हो सका। आपने अब एक ऐतिहासिक ग्रंथमाला नाम की पुस्तकावली छापना प्रारंभ किया है। इसके पहले भाग में सोलंकियों का इतिहास है। सिरोही राज्य का इतिहास भी आपने लिखा है। आपने पृथ्वीराज-विजय नामक ऐतिहासिक काव्य-ग्रंथ का संपादन भी किया है पर वह अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका। यह ग्रंथ इतिहास का अमूल्य रत्न है। प्राचीन शोध का पंडितजी को बड़ा व्यसन है। वे अपना सारा समय इसके अर्पण करते हैं। प्राचीन स्थानों को देखना, उनका इतिहास जानना, प्राचीन वस्तुओं का संग्रह करना —बस इन्हीं में आपका कालक्षेप होता है। प्राचीन सिक्कों का एक बहुमूल्य संग्रह भी आपने किया है।

पंडितजी का उदयपुर राज्य में बड़ा मान था और ब्रिटिश गवर्नमेंट ने भी आपके गुणों पर रीझकर अनेक बार अपनी गुण-ग्राहिता का परिचय दिया है। उदयपुर में जितने वाइसराय गए हैं उनसे मिलने और बातें करने का पंडितजी को सदा गौरव प्राप्त हुआ था। कुछ वर्ष हुए, गवर्नमेंट की तरफ से कलकत्ते में एक म्यूजियम कान्फरेंस हुई थी, उसमें पंडितजी निमंत्रित होकर गए थे। आपको गवर्नमेंट ने पहले रायबहादुर की और कुछ काल के अनंतर महामहोपाध्याय की पदवी दी। काशी-विश्वविद्यालय ने आपको डाक्टर की आनरेरी उपाधि देकर सम्मानित किया है।

दिल्ली अधिवेशन में हिंदी साहित्य-सम्मेलन ने आपकी रचनाओं पर मंगलाप्रसाद पारितोषिक देकर और शिमला के अधिवेशन में साहित्यवाचस्पति की उपाधि देकर आपको सम्मानित किया।

आपके रचित मुख्य ग्रंथ ये हैं :—

१ प्राचीन लिपिमाला, २ सोलंकियों का इतिहास, ३ सिरोही राज्य का इतिहास, ४ राजपूताने का इतिहास, ५ उदयपुर राज्य का इतिहास २ भाग, ६ डूँगरपुर राज्य का इतिहास, ७ बासवाड़ा राज्य का इतिहास, ८ जोधपुर राज्य का इतिहास २ भाग, ९ प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास अप्रकाशित, १० बीकानेर राज्य का इतिहास, २ भाग अप्रकाशित, ११ मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, १२ पृथ्वीराजविजय, १३ अशोक की धर्मलिपियाँ, पहला भाग।

इनके अतिरिक्त ऐतिहासिक विषयों पर आपके अनगिनत लेख भिन्न भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में यथासमय प्रकाशित हुए हैं, जिनका संग्रह किया जाय तो एक बड़ा भारी ग्रंथ बन सकता है।

आप प्रकृति के सरल और अभिमानरहित हैं और बड़े सत्त्व-गुणी तथा सच्चरित्र हैं। आपकी स्मरणशक्ति अद्भुत है, जिसे एक बार पढ़ लेते हैं उसे फिर कभी नहीं भूलते। जिन्हें एक बार भी आपके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे आपके गुणों और स्वभाव पर मुग्ध होते हैं। आप से विद्वान् हिंदीसमाज के गौरव तथा अभिमान के कारण हैं। ओझाजी की मातृभाषा गुजराती है, पर आपने हिंदी को अपनाकर उसके ऐतिहासिक भांडार की पूर्ति करने का ध्येय सामने रखकर सदा कार्य किया है। आप ही के उद्योग से मुंशी देवीप्रसाद ने ऐतिहासिक पुस्तकों को प्रकाशित करने के लिये काशी नागरीप्रचारिणी सभा को इंपिरियल बैंक के सात हिस्से देकर एक अच्छी निधि की स्थापना की।

——

(३) पु० हरिनारायण शर्मा, बी० ए०, विद्याभूषण

आपका जन्म उच्च पारीक राजपुरोहित कुल में माघ कृष्ण ४ सं० १९२१ को जयपुर में हुआ था। आपके पिता का नाम पु० मुन्नालाल जी, पितामह का नानूलाल जी तथा प्रपितामह का अभयराम जी था। यह कुल कौंथड़िया खांप का जयपुर में प्रसिद्ध है। इस कुल में धुरंधर पंडित तथा यशस्वी पुरुष हुए हैं। आपकी शिक्षा का आरंभ जोशीजी के यहाँ हुआ था। हिंदी और हिसाब का कुछ ज्ञान हो जाने पर अमरकोष और सारस्वत पढ़ाया गया। कुछ समय तक मकतब में उर्दू तथा फारसी पढ़ी, अपनी दादी जी से गीता, सहस्रनाम तथा रामस्तवराज का कुछ अभ्यास प्राप्त किया। बड़ी बहिन योगिनी मोतीबाई से धर्मज्ञान, संगीत, योगाभ्यास का बोध, काव्यकीर्तन और भगवद्भजन की प्रवृत्ति पाई। म० म० पं० शिवदत्तजी से संस्कृतव्याकरण तथा प्रसिद्ध वेदिया पं० मांगीलालजी से काव्य तथा वेदांतादि का अध्ययन किया। बारह वर्ष की आयु में आप ज्येष्ठ भ्राता रामनारायण जी के प्रेम और कृपा से महाराजा कालेज जयपुर में भर्ती किए गए। सं० १९४३ में एंट्रेंस, ४६ में एफ० ए० तथा ४८ में बी० ए० की परीक्षा पास की। मिडिल से लेकर बी० ए० तक बराबर प्रथम रहे, जिसके कारण अंत तक छात्रवृत्ति पाते रहे और लार्ड नार्थब्रुक तथा लार्ड लैंसडाउन मेडल पाए। अँगरेजी और उर्दू के लेखों में भी आपको प्रथम पुरस्कार मिले थे। प्राइवेट एम० ए० पास करना चाहते थे, किंतु राज्य ने अपनी सेवा में ले लिया।

दो वर्ष बाद ही आपने अपनी प्रतिभा और प्रबंध-कुशलता का परिचय दिया, जिससे आप उत्तरोत्तर उच्च पद पर आसीन होते गए। आपने राज्य में अनेक सुधार किए। जनता की सुख-

शांति का बराबर ध्यान रखा, शिक्षा-प्रचार में बड़ी सहायता दी। पारीक पाठशाला हाईस्कूल को आपने ७००० रु० से अधिक दान दिया। आपने बड़ी सचाई, सुनीति तथा दबदबे के साथ राज्य का कार्य किया। सं० १९८९ में राज्य-कार्य से अवकाश ग्रहण कर लिया।

हिंदी और संस्कृत साहित्य से आपको बाल्यावस्था से प्रेम रहा है। जयपुर के 'हितैषी', 'संत' तथा उत्तर भारत की प्रमुख पत्रिकाओं में आपके लेख निकलते थे। अनेक ग्रंथों पर आपने भूमिकाएँ लिखी हैं तथा कुछ डिंगल ग्रंथों का भी संपादन किया है। संस्कृत भाषा से आपका हार्दिक प्रेम था। हिदा-साहित्य, इतिहास, दर्शनशास्त्र, धर्मज्ञान, ज्योतिष, समीक्षा तथा अनुसंधान की ओर आपकी अधिक रुचि है। आपको हिंदी साहित्य के मुद्रित तथा हस्तलिखित ग्रंथों के संग्रह करने का शौक है। संत-साहित्य के ग्रंथ आपने प्रचुरता से संगृहीत किए हैं। आपके घर में लगभग दस हजार पुस्तकों का एक लायब्रेरी है, जिसमें संस्कृत, हिंदी, डिंगल, राजस्थानी, जयपुरी, अँगरेजी, उर्दू, फारसी, अरबी, पश्तो, मराठी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी आदि विभिन्न भाषाओं की पुस्तकें हैं। उसी में कानून की भी पुस्तकें हैं। आपके संपादित ग्रंथ ये हैं:—

१ विशूचिकानिवारण, २ तारागण सूर्य हैं, ३ महामति मि० ग्लेडस्टोन, ४ सतलड़ी, ५ सुंदरसार, ६ महाराजा मिर्जा राजा मानसिंह प्रथम, ७ महाराजा मिर्जा राजा जयसिंह प्रथम, ८ व्रजनिधि ग्रंथावली, ९ सुंदर ग्रंथावली, १० महाकवि गंग के कवित्त, ११ गुरु गोविंदसिंह के पुत्रों की धर्मबलि।

इनके अतिरिक्त आपके पचीसों संपादित तथा संगृहीत ग्रंथ अप्रकाशित हैं। इस समय आप ७६ वर्ष के हैं। काम करने की शक्ति क्षीण हो गई है, फिर भी यथाशक्ति अपूर्ण कार्य को पूरा

करने की रुचि बनी रहती है। आप प्रारंभ ही से नागरीप्रचारिणी सभा काशी के सदस्य रहे हैं। इन्हीं के उद्योग से बालाबख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला के लिये काशी नागरीप्रचारिणी सभा में एक निधि स्थापित हुई।

---

(४) पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

आपका जन्म बैसाख कृ० ३ सं० १९२२ में तमसा नदी के किनारे निजामाबाद में हुआ था। आप सनाढ्य ब्राह्मण हैं। आपके पिता का नाम पं० भोलासिंह उपाध्याय था। आपके पूर्वज बदाऊँ के रहनेवाले थे। किंतु लगभग तीन सौ वर्षों से आजमगढ़ के पास निजामाबाद में आकर बस गए थे। जमींदारी और पंडिताई आपकी वंश-परंपरागत जीविका थी।

आपके चाचा ब्रह्मासिंह ने पाँच वर्ष की अवस्था में आपको विद्यारंभ करवाया और सात वर्ष की अवस्था में आप निजामाबाद के तहसीली स्कूल में भरती हुए। सं० १९३६ में आपने मिडिल पास किया। आपको वजीफा भी मिला। उसके बाद आप बनारस के क्वींस कालेज में अँगरेजी पढ़ने लगे, किंतु थोड़े ही दिनों के अनंतर स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण पढ़ना छोड़कर आपको घर लौट आना पड़ा। घर पर चार-पाँच वर्ष तक उर्दू, फारसी और संस्कृत का अभ्यास करते रहे। सं० १९३९ में आपका विवाह हुआ और १९४१ में आप निजामाबाद के तहसीली स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए। सं० १९४४ में आपने नार्मल पास किया।

सं० १९४६ में आपने कानूनगोई की परीक्षा पास की और कानूनगो के पद पर नियुक्त हो गए। अपनी योग्यता के कारण आपने शीघ्र ही उन्नति की। रजिस्ट्रार कानूनगो, सदर-नायब कानू

नगो, और गिरदावर कानूनगो आदि पदों पर लगभग ३४ वर्षों तक सफलतापूर्वक बृटिश राज्य की सेवा करने के अनंतर पेंशन लेकर १ नवंबर सन् १९२३ से आप काशी विश्वविद्यालय में हिंदी साहित्य के अध्यापन का कार्य करने लगे। अब वहाँ से भी आपने अवकाश ग्रहण किया है।

आपक रचनाएँ ये हैं :—

१ **नाटक**—१ रुक्मिणी-परिणय, २ प्रद्युम्न-विजय व्यायोग।

२ **उपन्यास**—३ ठेठ हिंदी का ठाठ, ४ अधखिला फूल, ५ वेनिस का बाँका, अनु० ६ कृष्णकांत का दानपत्र. अनु०, ७ रिपवान वि कल, अनु०।

३ **नीतिग्रंथ**—८ नोति निबंध, अनु० ९ उपदेश-कुसुम, अनु० १० विनोद-वाटिका, अनु० ११ चरितावली अनु०।

४ **व्याख्यान-माला**—१२ उद्बोधन, १३ सम्मेलन-संदर्भ, १४ सनाढ्य सभा-संभाषण, १५ गोरक्षा-गौरव, १६ प्रदर्शनी-प्रवचन, १७ हिंदी भाषा और उसके विकास का इतिहास।

५ **गणित ग्रंथ**—१८ अंकगणित।

६—**साहित्य ग्रंथ**—१९ कबीर-वचनावली, (संग्रह) २० चारु चयन (संग्रह) २१ ऋतु मुकुर।

७ **पद्य ग्रंथावली**—२२ प्रेम-प्रपंच, २३ प्रेमांबुवारिधि, २४ प्रेमांबुप्रवाह, २५ प्रेमांबु-प्रस्रवण, २६ काव्योपवन, २७ प्रेम पुष्पोपहार, २८ बाल-विलास, २९ बाल-विभव, ३० पद्य प्रमोद, ३१ पद्य-प्रसून, ३२ फूल-पत्ते, ३३ कल्पलता, ३४ प्रियप्रवास, ३५ बोल-चाल, ३६ चोखे चौपदे, ३७ चुभते चौपदे, ३८ रसकलस, ३९ अच्छे अच्छे गीत, ४० उपहार, ४१ पारिजात, ४२ वैदेही-वनवास, ४३ ग्रामगीत,

४४ पवित्र पर्व, ४५ संदर्भ सर्वस्व, ४६ विभूतिमती व्रजभाषा, ४७ बाल पोथी, ५ भाग (संग्रह) ४८ वरनाक्यूलर रीडर, ४ भाग, ४९ मध्य हिंदी रीडर, ५ भाग।

निजामाबाद में एक सिक्ख साधु सुमेरसिंह हिंदी के अच्छे कवि थे। उन्हीं के संपर्क से आपकी रुचि हिंदी की ओर बढ़ी। आपने पहले व्रजभाषा में कविताएँ लिखना प्रारंभ किया, जो हिंदी की मासिक पत्रिकाओं में निकलती रहीं, किंतु पीछे से आपने खड़ी बोली को अपनाया और खड़ी बोली में कविता करके सिद्ध कर दिया कि आपका अधिकार खड़ी बोली पर भी उतना ही है जितना व्रजभाषा पर। अब भी समय समय पर आपकी कविताएँ हिंदी के प्रतिष्ठित पत्रों में प्रकाशित होती रहती हैं। हिंदी संसार में आपका एक विशेष स्थान है। आप कितनी ही साहित्यिक सभाओं तथा हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति रह चुके हैं। आप बँगला भाषा के भी अच्छे जानकार हैं। खड्गविलास प्रेस के मालिक बाबू रामदीन सिंह से आपकी बड़ी मित्रता थी। आपके प्रायः सभी ग्रंथ उसी प्रेस से प्रकाशित हैं। हिंदी का अतुकांत महाकाव्य प्रियप्रवास आपकी प्रतिभा का ज्वलंत प्रमाण है।

जब आपकी अवस्था लगभग ४० वर्ष की थी तभी आपकी धर्म-पत्नी का देहांत हो गया था। आपने फिर दूसरा विवाह नहीं किया। आपके एक पुत्र, एक पुत्री, दो पौत्र तथा दो पौत्रियाँ हैं। यद्यपि आप सनातनधर्मावलंबी हैं, किंतु अंधपरंपरा के अनुयायी नहीं। विलायत-यात्रा, बाल-विधवा-विवाह, अछूतोद्धार आदि के समर्थक हैं। आजमगढ़ की संस्कृतपाठशाला और सनातनधर्म-सभा के संचालकों में आप भी हैं।

आप गद्य-रचना की अपेक्षा कविता में अधिक सिद्धहस्त हैं और उसमें आपकी ख्याति चिरस्थायिनी है। संस्कृत छंदों में भी कविता करके आपने एक नई शक्ति हिंदी को दी है। इधर आप-

की रुचि मुहावरों के प्रयोग पर अधिक हुई है जिसमें शैली का तो चमत्कार है, पर कविता की उतनी उत्कृष्टता नहीं देख पड़ती। आपकी शैली से यह निर्णय करना कठिन है कि उसका वास्तविक रूप क्या है। एक ओर तो 'वेनिस के बाँका' की संस्कृतमय शैली और दूसरी ओर 'ठेठ हिंदी का ठाठ' उसके सर्वथा विपरीत है। इतना ही कहा जा सकता है कि आप सब प्रकार की भाषा लिखने में सिद्धहस्त हैं। आपकी कोई विशिष्ट शैली नहीं। आपका शब्द-भांडार प्रशस्त है।

---

(५) बाबू गोपालराम गहमरी

आपका जन्म पौष कृष्ण ८ गुरुवार सं० १९२३ में बारा (जिला गाजीपुर) में हुआ था। आपके पूर्वज वहीं के निवासी थे। आपके प्रपितामह श्री जगन्नाथ साहु फ्रांसीसी छींट के व्यापारी थे। उनके दो पुत्र थे—रघुनंदन और बृजमोहन। रघुनंदन जी के तीन पुत्र हुए—रामनारायण, कालीचरण और रामदास। यही रामनारायण गहमरीजी के पूज्य पिता थे।

गोपालरामजी ने वर्नाक्यूलर मिडिल तक की शिक्षा गहमर में पाई। सन् १८७९ ई० में आपने मिडिल पास किया। उसके पश्चात् ४ वर्ष तक आप गहमर स्कूल में लड़कों को पढ़ाते तथा स्वयं उर्दू और अँगरेजी का अभ्यास करते रहे। छोटी अवस्था होने के कारण आप नार्मल में भरती नहीं हो सके और आर्थिक स्थिति अच्छी न होने से अँगरेजी पढ़ने का खर्च सँभाल न सकते थे; क्योंकि आपके पिता आपको केवल ६ महीने का ही छोड़कर परलोक सिधारे थे। अंत में आप पटना नार्मल स्कूल में भरती

हुए जहाँ मिडिल पासवाले छात्रों को तीन वर्ष तक पढ़ना पड़ता था। किंतु बीच ही में आप बेतिया महाराजा स्कूल में हेड पंडित की जगह पर काम करने चले गए। वहाँ से लौटने पर आप बलिया में बंदोबस्त के काम में लग गए। सन् १८८८ ई० में सब कामों से छुट्टी लेकर आपने हाई फर्स्ट ग्रेड में नामल की परीक्षा पास की। सन् १८८९ में आप रोहतासगढ़ मिडिल स्कूल के हेड मास्टर नियुक्त हुए। वहाँ एक वर्ष तक काम करने के बाद आप बंबई में सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास के यहाँ लेखक का काम करने चले गए। वहाँ १८९९ तक काम करते रहे। फिर भारत-मित्र का संपादन करने कलकत्ता चले गए। वहाँ आप सन् १९०० तक काम करते रहे। उसके अनतर गहमर आकर आपने जासूस नाम का मासिक पत्र निकाला। हिंदी में अपने विषय का वह एक ही पत्र था, जो १९०० से १९३९ तक बराबर निकलता रहा, किंतु अंत में ग्राहकों की कमी के कारण ४० वर्षों के बाद बंद हो गया।

सन १८८५ से १९०० तक आपने छोटे-बड़े १५० उपन्यास और नाटक लिखे तथा अन्य भाषाओं से अनुवाद किए। इनके अतिरिक्त आपने 'इच्छाशक्ति' तथा 'मोहनी विद्या' नाम की दो पुस्तकें अध्यात्म विषय पर लिखीं। सन् १८९४ में आपने 'वसंत-विकास' नामक कविता का पुस्तक रची।

साहित्यिक कार्य में आपका मूल भाव था सरल, सुगम, सुबोध हिंदी का प्रचार करना। आप सदा सरल, सब के समझने योग्य, हिंदी लिखते रहे। ऐसी पंडिताऊ हिंदी जिसके समझने के लिये कोश उलटना पड़े, आपको सदा नापसंद थी। आपका उद्देश्य यही रहा है कि सर्वसाधारण का हिंदी-पठन-पाठन में उत्साह बढ़े और गद्य-पद्य दोनों में खड़ी बोली का व्यवहार हो। खड़ी बोली और ब्रजभाषा के विवाद-काल में आपने पं० श्रीधर पाठक

का समर्थन किया था और खड़ी बोली के विरोधी पं० प्रतापनारायण मिश्र से कालेकाँकर में आपने भाषा की उन्नति की ओर ध्यान दिलाकर प्रार्थना की थी, फल-स्वरूप राष्ट्रोन्नति के विचार से मिश्रजी ने उसे स्वीकार भी कर लिया था।

आपकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं:—

१. जासूसी मौलिक उपन्यास—१ अजीब लाश, २ गुप्त भेद, ३ गुप्त चर, ४ डबल जासूस, ५ खूनी कौन है, ६ गाड़ी में खून, ७ जासूस की भूल, ८ अंधे की आँख, ९ जासूस की चोरी, १० किले में खून, ११ जासूस पर जासूस, १२ भयंकर चोरी, १३ रूप संन्यासी, १४ लटकती लाश, १५ कोचवान का खून, १६ हम हवालात में, १७ खूनी, १८ ठगों का ठाठ, १९ लाश किसकी है, २० आँखों देखी घटना, २१ खूनी का भेद, २२ मत्तो पत्तो, २३ हत्याकृष्ण, २४ अपराधी की चालाकी, २५ सुंदर बेणी, २६ अपनी रामकहानी, २७ विकट भेद, २८ जासूस की विजय, २९ मुर्दे की जाँच, ३० मेम की लाश, ३१ जासूस की जवाँमर्दी, ३२ जासूस पर जासूसी, ३३ जैसा मुँह वैसा थप्पड़, ३४ सरवर की सुरागरसानी, ३५ खूनी की चालाकी, ३६ चाँदी का चक्कर, ३७ घूसनलाल दारोगा, ३८ भीतर का भेद, ३९ धुरंधर जासूस, ४० हमारी डायरी, ४१ खूनी की खोज छोटी, ४२ जासूस की डायरी, ४३ जासूस की बुद्धि, ४४ कैदी की करामात, ४५ देवी नहीं दानवी, ४६ लड़का की चोरी, ४७ सोहनी गायब, ४८ डाक्टर की कहानी, ४९ केशिनी बाई, ५० केतकी की शादी, ५१ घर का भेदी, ५२ नेमा, ५३ योगमहिमा, ५४ अर्थ का अनर्थ, ५५ मरे हुए की मौत, ५६ भयंकर चोरी, ५७ देखी हुई घटना, ५८ जासूस जगन्नाथ, ५९ नगदनारायण, ६० डकैत कालूराम, ६१ भयंकर भेद, ६२ स्वयंवरा, ६३ भंडाफोड़, ६४ रहस्य विप्लव, ६५ होली का हरभोंग, ६६ जमींदारों का जुल्म।

२. अनुवादित जासूसी उपन्यास—६७ हीरे का मोल, ६८ विकट बदलौअल, ६९ नील-वसना सुंदरी, ७० मायावी, ७१ मनोरमा, ७२ मायाविनी, ७३ कपट-रूप बाला, ७४ गोविंदराम, ७५ जासूस चक्कर में, ७६ जय पराजय, ७७ प्रतिज्ञा-पालन, ७८ लाइन पर लाश, ७९ भयंकर भूल, ८० मृत्युविभीषिका, ८१ डाकू की पहुनाई, ८२ कामरूप का जादू।

३. जासूसी उपन्यास अन्य ग्रंथ के आधार पर—८३ दो बहन, ८४ भानमती, ८५ जोड़ा डिटेक्टिव, ८६ जाल राजा, ८७ संदूक का मुर्दा, ८८ बेकसूर को फाँसी, ८९ सिर-कटी लाश, ९० डबल चोर, ९१ बेगुनाह का खून, ९२ फिरोजा बीबी, ९३ वाहरे जासूस, ९४ घटना घटाटोप, ९५ थाना की चोरी, ९६ देवीसिंह, ९७ हरिदास की गिरफ्तारी, ९८ जाली बीबी डाकू साहब, ९९ सती शोभना, १०० खूनी की खोज बड़ी, १०१ सुमित्रा देवी, १०२ अद्भुत खून, १०३ साहब जासूस, १०४ वजीरन बीबी, १०५ कटा सिर, १०६ खून, १०७ जासूसी तिगड्डा, १०८ विलायती जासूस, १०९ दो लाख रुपया, ११० मरियम, १११ शठ-शिरोमणि, ११२ कचुए के बिल में साँप, ११३ अद्भुत जासूस, ११४ चोर की चालाकी, ११५ मस्तराम का झोला, ११६ सुनहरी टोली, ११७ गाड़ी में लाश, ११८ गाड़ी में मुर्दा, ११९ चक्रभेद, १२० जमुना बेगम, १२१ घरेलू घटना, १२२ परिचय, १२३ पिशाच-लीला, १२४ साहब की गिरफ्तारी, १२५ गुप्त पुलिस, १२६ काशी की घटना, १२७ उड़नखटोला, १२८ यारों की लाला, १२९ मेरी व मेरीना।

४. सामाजिक मौलिक उपन्यास—१३० चतुर चंचला, १३१ नए बाबू, १३२ बाकी बेबाक, १३३ आदमी बनो, १३४ ननद भौजाई, १३५ संकट में शिक्षा, १३६ आशा, १३७ अंधे के हाथ बटेर, १३८ दादा और मैं।

५. सामाजिक अनुवादित उपन्यास—१३९ माधवीकंकण, १४० कर्ममार्ग।

६. सामाजिक उपन्यास अन्य ग्रंथ के आधार पर—१४१ सास-पतोहू, १४२ तीन पतोहू, १४३ गृहलक्ष्मी, १४४ बड़ा भाई, १४५ देवरानी-जेठानी, १४६ डबल बीबी।

७. ऐतिहासिक मौलिक उपन्यास—१४७ अमरसिंह, १४८ खून, १४९ (सत्य घटनाएँ) हम हवालात में, १५० बेबादल का वज्र, १५१ आसमानी कातिल, १५२ घड़े में थाली, १५३ लँगड़े की सैर, १५४ थानेदार को थप्पड़, १५५ चोर की बुद्धि, १५६ लँगटू बाबा, १५७ संदेह-भंजन, १५८ भगेलू का भाग्य, १५९ एक्सीडेंटल।

८. ऐतिहासिक अनुवादित नाटक—१६० यौवन योगिनी, १६१ वनवीर।

९. सामाजिक मौलिक नाटक—१६२ वर्तमान बंचक चपेट एकांकी, १६३ देशदशा, १६४ विद्याविनोद, १६५ जीवन-सुधार (अप्रकाशित)।

१०. ऐतिहासिक मौलिक नाटक—१६६ बभ्रुवाहन, १६७ जन्मभूमि।

११. जासूसी मौलिक कहानी—१६८ डिपुटी का न्याय, १६९ अपराधी की वकालत, १७० सूम का मंत्र, १७१ हीरे की धुकधुकी, १७२ देवरानी-जेठानी, १७३ अटल प्रतिज्ञा, १७४ प्रेमी की फाँसी, १७५ बलिहारी बुद्धि, १७६ चित्रा में चलो सैयाँ।

१२. जासूसी कहानी अन्य ग्रंथ के आधार पर—१७७ विफल प्रयास, १७८ लीलाधर का खून, १७९ गुप्त फोटो, १८० हीरों का कंठा, १८१ सौभद्रा।

(जासूसी) १८२ जाली काका, १८३ हंसराज की डायरी, १८४ गेरुआ बाबा, १८५ झंडा डाकू।

१३. मेस्मरेजम संबंधी—१८६ इच्छाशक्ति, १८७ जीवनमृत-रहस्य (अनुवाद), १८८ मोहिनी विद्या (मौलिक)।

१४. काव्य मौलिक—१८९ सोनाशतक, १९० वसंत-विकास, १९१ चित्रांगदा।

१५. अन्य ग्रंथ के आधार पर वैज्ञानिक उपन्यास—१९२ चलता पुर्जा।

१६. व्यंग्य—१९३ प्लेग का वक्तव्य (मौलिक), १९४ गोबर गणेश संहिता (अनुवाद), १९५ रंग की बातें (मौलिक)।

१७. फुटकर—१९६ गेरुआ बाबा (मौलिक), १९७ विचित्र चोरी (मौलिक), १९८ गुमनाम चिट्ठी (मौलिक), १९९ ठनठन गोपाल (मौलिक), २०० सच्ची घटना (मौलिक), २०१ भर्तृहरि-सार (संकलित), २०२ छापेखाने के कानून (अनुवाद), २०३ तातिया की बहादुरी (अनुवाद), २०४ मन्नू से राय मुन्नालाल बहादुर, २०५ दीर्घ जीवन।

---

(६) सेठ कन्हैयालाल पोद्दार

आपका जन्म सं० १९२८ में मथुरा नगर में हुआ था। आपके पूर्वजों का निवासस्थान चूरू (बीकानेर राज्य) है। वहाँ से वे लोग चलकर जयपुर राज्य के रामगढ़ ग्राम में स्थायी रूप से रहने लगे थे। सं० १९०० के लगभग आपके प्रपितामह सेठ गुरसहायमल जी ने मथुरा आकर श्री गोविंददेव जी का मंदिर बनवाया और उसी समय से सकुटुंब मथुरा में निवास करने लगे। आपके पूर्वजों में सेठ ताराचंद जी पोद्दार थे, जिनके पुत्र सेठ गुरसहायमल जी हुए। सेठ गुरसहायमल जी के पुत्र सेठ घनश्यामदास जी थे, जिनके पुत्र सेठ जयनारायण जी थे और इनके पुत्र सेठ कन्हैयालाल जी हुए।

आपके पिता अनन्य भगवद्‌भक्त थे। उन्हें अँगरेजी शिक्षा से अरुचि थी, अतः सेठ कन्हैयालाल की शिक्षा संस्कृत से प्रारंभ हुई। सं० १९४० में आपके पिता की मृत्यु हो जाने पर व्यापार और गृहस्थी का सारा भार आप पर आ पड़ा जिसे आपने अत्यंत कुशलतापूर्वक सँभाला। उस समय आपकी अवस्था केवल १२ वर्ष की थी; फिर भी आपने धर्य न छोड़ा और आप व्यापारादि में लगे रहते हुए भी विद्याभ्यास करते रहे। श्रीमद्‌भागवत, श्रीवाल्मीकीय रामायण तथा श्री रामचरितमानस के पठन और मनन का आप पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। धीरे धीरे आप काव्यरचना का अभ्यास करने लगे। सं० १९४७ में भर्तृहरि के तीनों शतकों का व्रजभाषा में आपका पद्यानुवाद कालाकांकर के प्रसिद्ध दैनिक हिंदोस्थान में निकला। तब से हिंदी की प्रसिद्ध मासिक पत्रिकाओं—जैसे सरस्वती, माधुरी, सुधा, वीणा आदि—में आपकी रचनाएँ प्रकाशित होती रहीं। यथासमय आपने निम्नलिखित ग्रंथ लिखे—

१. अलंकार-प्रकाश, २ गंगालहरी का पद्यानुवाद, ३ पंचगीत, ४ हिंदी-मेघदूत-विमर्श, ५ काव्य-कल्पद्रुम, ६ संस्कृत-साहित्य का इतिहास, २ भाग।

आपके लिखे हुए उपर्युक्त सभी ग्रंथ उच्च कोटि के हैं और अपनी सार्थकता की दृष्टि से एक ही हैं। हिंदी के प्रायः सभी उद्‌भट विद्वानों ने आपके ग्रंथों की प्रशंसा की है और उनके मूल्य को समझा है। आपके काव्य-कल्पद्रुम का हिंदी-जगत् में बहुत मान हुआ। यह ग्रंथ हिंदी की कई उच्च परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में है।

सेठ जी का न केवल साहित्य-संसार में ही प्रत्युत मारवाड़ी समाज में भी एक विशेष स्थान है। हाथरस में होनेवाली प्रांतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के आप सभापति बनाए गए थे।

अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी पंचायत, जो बंबई में हुई थी, उसके भी सभापति आप ही थे। लक्ष्मणगढ़ में होनेवाले अखिल सनातनधर्मानुयायी मारवाड़ी युवक सम्मेलन के सभापति भी आप थे।

विद्वान् होने के साथ साथ आप बड़े मिलनसार, सादगी-पसंद और विनोदप्रिय हैं। एक बार भी इनके संपर्क में आनेवाला व्यक्ति इनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। व्यापार आदि से समय निकालकर आपने साहित्य की जो सेवा की है उसके लिये वास्तव में आप बधाई के पात्र हैं।

——

(७) रावराजा रायबहादुर डाक्टर श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०, डी० लिट्०

आपका जन्म १२ अगस्त सन् १८७३ में लखनऊ जिले के इटौंजा नामक ग्राम में हुआ था। आप प्रतिष्ठित वंश के कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। आपके पूर्वजों में पं० राम मिश्र हुए थे जिन्होंने काशी के पंडितों द्वारा द्विवेदी से मिश्र की उपाधि पाई। इस वंश में पं० चिंतामणि मिश्र और मिश्र साँवलेकृष्ण जी हुए जो अपनी विद्वत्ता के कारण अपने समय में प्रसिद्ध और सम्मानित थे।

सात वर्ष की अवस्था में आपके पिता पं० बालदत्त जी मिश्र ने आपकी शिक्षा का श्रीगणेश कराया। उसके अनंतर आप एक मौलवी साहब से उर्दू पढ़ते रहे और अपर प्राइमरी स्कूल में भी जाते रहे। दो वर्ष तक आपने चर्च मिशन हाईस्कूल बस्ती में शिक्षा पाई। सन् १८८६ से आप अपने बड़े भाई के साथ रह-कर लखनऊ में पढ़ने लगे। वहाँ भी एक स्कूल से दूसरे स्कूल

में भरती होते रहे। सन् १८९१ में जुबिली हाईस्कूल लखनऊ से एंट्रेंस पास किया। उसके पीछे कैनिंग कालेज से १८९३ में इंटरमीजिएट्, १८९५ में बी० ए० और १८९६ में एम० ए० परीक्षा पास की। अत्यंत उच्च कोटि में पास होने के कारण आपका नाम कालेज की दीवार में स्वर्णाक्षरों में लिखा गया। उस समय कालेज के प्रिंसिपल ही डिप्टी कलेक्टरों का चुनाव करते थे। यद्यपि आपने उसके लिये प्रार्थनापत्र नहीं भेजा था, फिर भी प्रिंसिपल डाक्टर ह्वाइट ने समझा-बुझाकर प्रार्थनापत्र दिलवाया और डिप्टी कलेक्टरी के लिये चुन लिया।

सन् १८९७ में मिश्र जी डिप्टी कलेक्टर हुए और तब से कई अन्य ओहदों पर काम किया। कई रियासतों के दीवान तथा सेक्रेटरी हुए। ढाई वर्ष तक आप पुलिस सुपरिंटेंडेंट रहे और ३ वर्ष तक मैजिस्ट्रेट तथा कलेक्टर रहे। इन सरकारी पदों पर रहकर आपने प्राय: समस्त भारत का भ्रमण किया। विभिन्न पदों पर काम करने से आपका अनुभव बहुत बढ़ा और आपने सरकार का ध्यान कई आवश्यक बातों पर आकृष्ट किया।

सरकारी नौकरी के अवसर में इनके विरुद्ध एक बड़ा भयानक षड्यंत्र रचा गया था, पर अंत में दूध का दूध और पानी का पानी हो गया।

सन् १९२४ से १९२८ तक कौंसिल आफ स्टेट के आनरेबुल मेंबर रहे। सन् १९२८ में आपको रायबहादुर की उपाधि मिली। सन् १९३३ में सवाई महेंद्र महाराजा ओरछा ने आपको रावराजा की पदवी दी, जो पदवी राजपुत्रों और भाई-भतीजों को छोड़कर अन्य किसी को नहीं मिली थी। सन् १९३७ में मिश्र जी को विद्वत्ता और साहित्यसेवाओं के कारण प्रयाग विश्वविद्यालय ने डी० लिट० की आनरेरी उपाधि दी।

मिश्र जी ने स्कूल या कालेज में हिंदी नहीं पढ़ी, केवल स्वाध्याय और सत्संग द्वारा ही हिंदी का इतना विशाल ज्ञान उपार्जन किया। अपने बहनोई विशाल कवि के संपर्क से आपको कविता करने का अभ्यास बढ़ा। आपके लघु भ्राता पं० सुखदेव-विहारी मिश्र भी हिंदी के अच्छे विद्वानों में से हैं। आप लोगों में बड़ा स्नेह है और सभी ग्रंथ दोनों के एक साथ परिश्रम से तैयार हुए हैं। आप लोग 'मिश्रबंधु' नाम से प्रसिद्ध हैं। आप दोनों ने मिलकर निम्नांकित ग्रंथ रचे अथवा संपादित किए हैं।

१. लवकुशचरित्र, २ मदनदहन, ३ विक्टोरिया-अष्टादशी, ४ व्यय, ५ भूषणग्रंथावली, टीका, ६ रूस का संक्षिप्त इतिहास, ७ जापान का संक्षिप्त इतिहास, ८ हिंदी हस्तलिखित ग्रंथों की खोज की रिपोर्ट, ९ मिश्रबन्धुविनोद, ४ भाग, १० हिंदी नवरत्न, ११ भारत-विनय, १२ पुष्पांजलि, १३ वीरमणि, १४ बुद्ध-पूर्व भारत का इतिहास, १५ मुस्लिम आक्रमण के पूर्व भारत का इतिहास, १६ आत्मशिक्षण, १७ बूँदी बारीश, १८ सूर-सुधा, १९ गद्य पुष्पांजलि, २० सुमनोंजलि, २१ उत्तर भारत-नाटक, २२ नेत्रोन्मीलन, २३ पूर्व भारत-नाटक, २४ शिवाजी नाटक, २५ धर्मतत्त्व, २६ ईशान वर्मन नाटक, २७ हिंदी-साहित्य का इतिहास, २८ हिंदी अपील, २९ संक्षिप्त हिंदी-नवरत्न, ३० हा काशीप्रकाश, ३१ देव-सुधा, ३२ बिहारी-सुधा।

इनके अतिरिक्त आपने अँगरेजी में भी ५ ग्रंथ लिखे हैं।

आपने हिंदी संसार की बहुत सेवा की है। अपने अमूल्य ग्रंथों से भारती के भांडार को निरंतर भरते रहे हैं। आप अनेक ऊँची परीक्षाओं के परीक्षक रह चुके हैं और कई विश्वविद्यालयों की सेनेट आदि के मेंबर हैं। साहित्य के अतिरिक्त आपने समाज की भी सेवा की है। आप अनेक सामाजिक सभाओं के सभापति तथा सदस्य रह चुके हैं और अब भी हैं। शिवसिंह सरोज के

अनंतर आपका मिश्र-बंधुविनोद ग्रंथ ही ऐसा है, जिसके आधार पर हिंदी-साहित्य के अनेक इतिहास भिन्न भिन्न पद्धतियों पर लिखे गए। इसके लिये इन्हें जितना श्रेय दिया जाय थोड़ा है। आप ग्वालियर-अधिवेशन में अखिल भारतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की अध्यक्षता कर चुके हैं।

---

(८) बाबू ब्रजनंदनसहाय बी० ए०, 'ब्रजवल्लभ'

आपका जन्म भाद्रपद शुक्ल ८ सं० १९३१ को आरा से ३ मील पश्चिम अखतियापुर ग्राम में हुआ था। आप श्रीवास्तव कायस्थ हैं। आपके पूर्वजों को छसैया कानूनगो की पदवी मिली थी जो अब तक चली आती है। यह पदवी मुगल शासन के समय में उसे दी जाती थी, जो छः सौ घुड़सवारों का सर्दार होता था। आपके प्रपितामह श्री भगवानसहायजी को सन् १७९५ में अपने गाँव में पहले पहल वकालत की सनद मिली। इनके पौत्र श्री कालीसहायजी थे। श्री कालीसहायजी के पुत्र बाबू शिवनंदनसहाय और उनके पुत्र श्री ब्रजनंदनसहाय हैं। आपके पिता भी हिंदी के प्रसिद्ध लेखक थे।

बचपन में आपने अपने बूढ़े दादाजी से कुछ हिंदी और कुछ उर्दू सीखी तथा पिताजी के पास रहकर कुछ अँगरेजी और फारसी पढ़ी। बचपन में आप बहुत नटखट थे। इनकी चंचलता को देखकर इनके माता-पिता को इनके भविष्य के विषय में संदेह हो रहा था। अपने गाँव के सोसाइटी स्कूल से निकलकर आप पटना के कालिजियट स्कूल में भरती हुए। फिर वहाँ से टी० के० घोष एकेडेमी में चले गए। पटने के इन दो स्कूलों में पढ़ने से कुछ

चंचलता कम हुई, फिर भी पढ़ने-लिखने की ओर उतना मन न लगा, थोड़ी-बहुत उद्दंडता बनी ही रही। पिताजी को आफिस के काम से छुट्टी न मिलती थी जो देख-रेख करते। अतः उन्होंने अपने एक संबंधी श्री मथुराप्रसाद जी के पास आपको गया भेज दिया। श्री मथुराप्रसाद जी उस समय के योग्य शिक्षकों में से थे। आप उनसे बहुत प्रभावित हुए और पढ़ने में मन लगाने लगे। गया के स्कूल से ही आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय की एंट्रेंस परीक्षा पास की। उच्च शिक्षा के लिये आप फिर पटना आए और बी० एन० कालेज में भरती हुए। वहाँ से आपने बी० ए० और वकालत की परीक्षाएँ पास कीं। बी० ए० तक आप फारसी पढ़ते रहे।

पटना में टी० के० घोष एकेडेमी में पढ़ते समय ही आपको बँगला पढ़ने का अवसर मिला था। कुछ दिनों तक आप अपनी दूसरी ससुराल वीरभूम (बंगाल) में रहे, जिससे बँगला पढ़ने का अच्छा अवसर मिला। बँगला उपन्यासों को पढ़ने से आपकी रुचि साहित्य की ओर हुई। एंट्रेंस की परीक्षा देने के पहले ही आपने अपनी सर्वप्रथम पुस्तिका राजेंद्रमालती लिख डाली। आपकी ब्रजभाषा में लिखी हुई कविताएँ बराबर काशी-कवि-मंडल और काशी-कवि-समाज में आदर पाती रहीं। पटना में कवि समाज की ओर से समस्यापूर्ति नामक एक पत्रिका निकली जिसके संपादक आप ही चुने गए। आपकी लिखित पुस्तकों में उपन्यास ही अधिक हैं। फिर भी आपने कविता, जीवनी, नाटक, अर्थशास्त्र आदि की पुस्तकें भी लिखी हैं। वकालत पास करने के पूर्व ही आपकी कविताओं का संग्रह 'ब्रजविनोद' और 'हनुमान-लहरा' भी प्रकाशित हो चुकी। बँगला का अच्छा ज्ञान होने से आपने सप्तम प्रतिमा, बूढ़ा वर, चंद्रशेखर, कमलाकांत का इजेहार और रजनी नामक उपन्यासों का हिंदी अनुवाद किया। इन

अनुवादों के अतिरिक्त आपकी निम्नलिखित मौलिक रचनाएँ हैं :—

१. राजेंद्रमालती, २ अद्भुत प्रायश्चित्त, ३ लालचीन, ४ विस्मृत सम्राट्, ५ सौंदर्योपासक, ६ विश्वदर्शन, ७ राधाकांत, ८ आरण्यबाला, ९ उषांगिनी, १० उद्धव, ११ सत्यभामामंगल, १२ निर्जन द्वीपवासी का विलाप, १३ ब्रजविनोद, १४ हनुमानलहरी, १५ अर्थशास्त्र, १६ बलदेवप्रसाद मिश्र (जीवनी), १७ बंकिमचंद्र, १८ राधाकृष्णदास, १९ विद्यापति ठाकुर।

आपके उपन्यास उच्च कोटि के और भावप्रधान हैं। आपके उपन्यासों की प्रशंसा बहुतों ने की। सौंदर्योपासक कई विश्वविद्यालयों तथा साहित्य-सम्मेलन के पाठ्यक्रम में रहा है। सौंदर्योपासक की प्रशंसा छतरपुर के स्वर्गीय महाराजा ने की थी और आपको आमन्त्रित करके सम्मानित किया था। विश्वदर्शन और विस्मृत सम्राट् आपकी उत्तम कृतियाँ हैं।

आरा में वकालत करते हुए आपने वहाँ की नागरीप्रचारिणी सभा की पर्याप्त सेवा की थी। सभा की 'नागरी-हितैषिणी' पत्रिका के आप कई वर्ष तक संपादक रहे। जब वह पत्रिका त्रैमासिक से मासिक हुई और उसका नाम साहित्य पत्रिका रखा गया, तब भी आप ही उसके संपादक रहे। आप उस सभा के प्रधान मंत्री भी थे। आपके समय में वहाँ की नागरीप्रचारिणी सभा की बड़ी उन्नति हुई। उसी समय आपने विद्यापति की जीवनी लिखकर यह सिद्ध कर दिया कि विद्यापति बंगाल के नहीं, बिहार के महाकवि थे।

वकालत के साथ-साथ आप बड़ी सच्ची लगन के साथ साहित्य की सेवा करते रहे जो क्रम अब तक जारी है। आप कुछ दिनों तक शिक्षा तथा प्रेमा भक्ति-प्रचारक पत्रों के भी संपादक रहे। इस समय आप आरा-साहित्य-परिषद् के सभापति हैं और

कभी कभी हिंदी की प्रतिष्ठित मासिक पत्रिकाओं में अपने लेख देते रहते हैं। आप बेगूसराय में चतुर्दश बिहार प्रादेशिक साहित्य-सम्मेलन के सभापति चुने गए थे।

आपके पितामह और पिता के द्वारा संग्रह किया हुआ एक पुस्तकालय है। आजकल आप वकालत के समय के अतिरिक्त सारा समय उसी पुस्तकालय में बिताते हैं और उसकी वृद्धि का प्रयत्न करते रहते हैं। अध्ययन के अतिरिक्त आपका समय ईश्वर-भजन और चिंतन में जाता है। अखिल भारतवर्षीय हरिनाम-यश-संकीर्तन के आप अनन्य प्रेमी और उसकी कार्यकारिणी समिति के सदस्य हैं।

---

(९) पंडित कामताप्रसाद गुरु

कोई तीन सौ वर्ष पूर्व पंडित कामताप्रसाद गुरु के पूर्वजों में से पंडित देवताराम पांडेय कानपुर जिले से आकर सागर (मध्य प्रदेश) जिले के गढ़पहरा ग्राम में बसे थे। इनका आस्पद कंपिला के पांडेय है। ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। गढ़पहरा में तत्कालीन दाँगी राजा की राजधानी थी। पंडित देवताराम जी अपनी योग्यता और कार्यकुशलता के कारण रानियों के दीक्षागुरु नियत हुए। तब से इन लोगों की उपाधि गुरु हो गई। धीरे-धीरे ये राज्य-कार्य में भी सहायता देने लगे। बुंदेलों के उपद्रव के कारण गढ़पहरा की राजधानी सागर जिले के परकोटा नाम के गाँव में लाई गई, और संवत् १६६० के लगभग वहाँ उदयसिंह नामक दाँगी राजा ने बस्ती बसाई और किला बनवाया। पंडित देवताराम को परकोटा में आकर बसना पड़ा। मरहठों के समय में दाँगी राजा

उदयसिंह के नाती पृथ्वीपति को, जो उनके उत्तराधिकारी हुए, बिलहरा आदि स्थानों की जागीर मिली और वे वहीं रहने लगे। गुरु वंश के लोगों को उन्होंने सागर के पास कई एकड़ माफी जमीन देकर परकोटा में ही रखा। पंडित देवताराम के पाँच पुत्र हुए, जिनमें से दूसरे पुत्र पंडित रामप्रसाद गुरु की चौथी पीढ़ी में पंडित गंगाप्रसाद गुरु हुए। इनकी भी दीक्षा वृत्ति थी और इसी से घर-गृहस्थी का काम चलता था।

इन्हीं गंगाराम जी के एकमात्र पुत्र पंडित कामताप्रसाद गुरु का जन्म संवत् १९३२ की पौष बदी २ (२४ दिसंबर, १८७५) को हुआ। पंडित कामताप्रसाद गुरु की प्रारंभिक शिक्षा सागर में हुई और वहीं के हाई स्कूल से सन् १८९२ में इन्होंने एंट्रेंस परीक्षा पास की। उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इनकी बड़ी अभिलाषा थी, तथा व्यय का साधारण साधन भी था; किंतु माता ने अधिक स्नेह के कारण, विदेश में कष्टों के भय से, पढ़ने के लिये इन्हें न जाने दिया। अतएव यहीं इनकी स्कूली शिक्षा समाप्त हुई। इसके अनंतर बंदोबस्त के दफ्तर में कुछ समय तक काम करने के बाद आपने सागर हाईस्कूल में २० रु० मासिक पर शिक्षक का पद ग्रहण किया। यहाँ पर इन्हें साहित्यिक रुचि बढ़ानेका अवसर मिला। घर पर उर्दू और फारसी का भी अध्ययन करते थे। लगभग ३ वर्ष के बाद ये रायपुर हाईस्कूल में बदल दिए गए। वहाँ से आप नार्मल स्कूल में चले गए। इसके पश्चात् कालाहंडी रियासत के मिडिल स्कूल के हेडमास्टर तथा रियासत के स्कूलों के डिप्टी इंसपेक्टर नियुक्त हुए। कालाहंडी में रहकर आपने उड़िया भाषा का विशेष अध्ययन किया। वहाँ से लौटने पर आप रायपुर में उड़िया के शिक्षक नियुक्त हुए। फिर वहाँ से आपकी बदली जबलपुर मेल नार्मल स्कूल में हुई, जहाँ आपका अधिकांश जीवन व्यतीत हुआ। यहीं से आपने सन् १९२८ में अवकाश ग्रहण

कर लिया और अब स्थायी रूप से जबलपुर के दीक्षितपुरा मुहल्ले में सकुटुंब निवास करते हैं।

आरंभ में आपने पत्र-पत्रिकाओं में लेख तथा कविताएँ लिखकर साहित्य की सेवा प्रारंभ की। शुभचिंतक (जबलपुर), छत्तीसगढ़मित्र, हिंदी-ग्रंथ-माला, सरस्वती तथा हितकारिणी पत्रिका में आप लेख देने लगे। पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख गद्य-पद्य दोनों में बहुत काल तक निकलते रहे।

सन् १९१८ में आप नार्मल स्कूल से एक वर्ष की छुट्टी लेकर इंडियन प्रेस प्रयाग में 'बालसखा' तथा 'सरस्वती' का संपादन करने गए थे। स्वर्गीय पं० श्रीधर पाठक के साथ 'प्रयाग-समाचार' में आपका एक अच्छा शाब्दिक विवाद (पद्यबद्ध) हुआ था। 'माधुरी' और 'सुधा' में भी आपके कुछ लेख तथा पद्य प्रकाशित हुए हैं।

गुरुजी केवल हिंदी-साहित्य के ही विद्वान् नहीं हैं, वरन् आपने अन्य भाषाओं में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। 'पयामे आशिक' में आप उर्दू के शेर लिखा करते थे। 'जबलपुर टाइम्स' तथा 'इंडियन एजुकेशन' में आपके समालोचनात्मक लेख छपे हैं। कलकत्ते से निकलनेवाले देवनागर में आपके दो एक उड़िया लेख भी निकले हैं। आपके सभी लेख प्रायः अध्ययनपूर्ण और गंभीर हैं। सब लेखों और पद्यों की संख्या एक सौ के लगभग है।

आपके रचे या अनुवादित ग्रंथ ये हैं :—

१. सत्यप्रेम, २ भौमासुर-वध, ३ पार्वती और यशोदा, ४ पद्य-पुष्पावली, ५ सुदर्शन, ६ हिंदुस्थानी शिष्टाचार, ७ देशोद्धार, ८ भाषा-वाक्यपृथक्करण, ९ सहज हिंदी-रचना और १० हिंदी-व्याकरण। इस हिंदी व्याकरण के संक्षिप्त, मध्यम और बाल तीन छोटे संस्करण भी छपे हैं।

आपकी विशेष रुचि व्याकरण की ओर थी और उस विषय में आपकी बुद्धि बहुत ही प्रखर है। आपने कई अँगरेजी अफसरों को हिंदी पढ़ाने का भार ले रक्खा था। व्याकरण की सहायता से ही आप उन्हें हिंदी पढ़ाते थे। आवश्यकता देखकर आपने सन् १९०० के लगभग 'भाषा-वाक्य-पृथक्करण' तथा 'सहज हिंदी-रचना' नामक पुस्तकों की रचना की। आपका सब से महत्त्वपूर्ण तथा विद्वत्ता-सूचक ग्रंथ 'हिंदी व्याकरण' है। यह ग्रंथ काशी-नागरी प्रचारिणी सभा ने प्रकाशित किया है। इस पुस्तक के संशोधन के लिये एक कमेटी नियुक्त की गई थी। उसने इस पुस्तक को अपने विषय की अद्वितीय पुस्तक कहा और यह सद्भाव प्रकट किया कि गुरु जी की कीर्ति स्थायी करने के लिये केवल यही एक ग्रंथ पर्याप्त है। इसी पुस्तक पर मध्यप्रदेश की सरकार ने गुरु जी को स्वर्णपदक प्रदान किया था तथा अनेक विद्वानों ने उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। आप कवि या लेखक के नाम से अधिक प्रसिद्ध न होकर व्याकरणाचार्य के नाम से विशेष प्रख्यात हैं। आप हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य रह चुके हैं। आज-कल आप नागपुर युनिवर्सिटी के हिंदी बोर्ड के और मध्य प्रांतीय लिटरेरी एकेडेमी के सदस्य हैं।

व्याकरण ऐसे शुष्क विषय में विशेष रुचि होने के कारण तथा उस विषय का और भी अधिक गंभीर अध्ययन करने की अनिवार्यता के वशीभूत होकर आपने संस्कृत, बँगला, मराठी और गुजराती भाषाओं के व्याकरण का अधिक अध्ययन किया है। यही कारण है कि आपका व्याकरण इतना सुंदर हुआ है। अभी तक हिंदी का कोई दूसरा व्याकरण इसकी समकक्षता नहीं कर सका है। इसी नाते आपने कुछ समालोचनाएँ भी लिखी हैं जो अपना विशिष्ट महत्त्व रखती हैं।

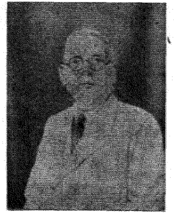

राय बहादुर पंडित सुखदेव-
बिहारी मिश्र

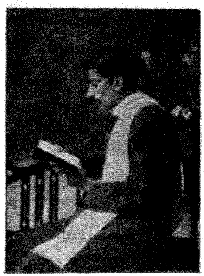

बाबू मैथिलीशरण गुप्त

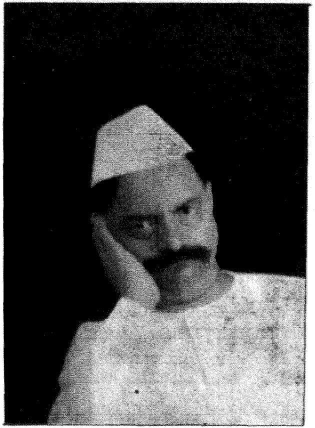

श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'

बाबू हरिकृष्ण जौहर

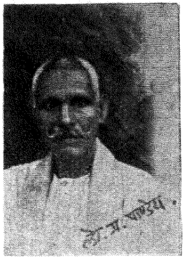

पंडित लोचनप्रसाद पाण्डेय

हिंदी के व्याकरणाचार्य के आसन के अधिकारी अब तक आप ही हुए हैं। जब से आप सागर हाईस्कूल में शिक्षक नियत हुए, तभी से आपके साहित्यिक जीवन का आरंभ हुआ। आपने लगभग ५० वर्ष तक हिंदी-साहित्य की सेवा की। आपके स्वभाव में गंभीरता के साथ विनोदप्रियता भी है। यह प्रसन्नता की बात है कि आपके ५ पुत्रों में साहित्य-प्रेमी तथा उदीयमान कवि और नाटककार हैं।

---

(१०) रायबहादुर पंडित सुखदेवविहारी मिश्र बी० ए०

आपका जन्म संवत् १९३५ (अप्रैल १८७८) में इटौंजा जिला लखनऊ में हुआ था। आपके पिता पं० बालदत्त जी मिश्र जमींदार और महाजन थे तथा हिंदी में थोड़ी-बहुत कविता भी कर लेते थे। रावराजा डा० श्यामविहारी मिश्र आपके ज्येष्ठ भ्राता हैं। आपके पूर्वजों तथा पूर्वनिवासस्थान के विषय में डा० श्यामविहारी मिश्र की जीवनी में लिखा जा चुका है। जन्म के समय उल्टे पैदा होने के कारण आप मूर्च्छित हो गए थे, किंतु उपचार करने के बाद आप बच गए। आप आरंभ में गाँव के स्कूल में उर्दू पढ़ते थे और घर पर हिंदी तथा अँगरेजी का अभ्यास करते थे। संवत् १९४५ में आप अपने ज्येष्ठ भ्राता पं० शिवविहारीलाल मिश्र के पास लखनऊ पढ़ने के लिये चले गए। सं० १९५० में आपने जुबिली हाई स्कूल से मिडिल पास किया और सरकारी वजीफा पाया। स्कूल फाइनल परीक्षा तथा एफ० ए० में भी आप प्रथम श्रेणी से पास होकर वजीफे के अधिकारी हुए। सं० १९५६ में आपने कैनिंग कालेज, लखनऊ से बी० ए० पास किया। बी० ए०

में सर्वप्रथम होने के कारण आपको तीन स्वर्णपदक मिले और आपका नाम कालेज की दीवार में स्वर्णाक्षरों में लिखा गया। सं० १९५८ में आपने वकालत पास की।

आपके छोटे बहनोई पं० भैरवप्रसाद वाजपेयी विशाल कवि आपके मित्रों में से थे। साधुराज और ब्रजराज मिश्र के द्वारा आपको कुछ साहित्यिक ज्ञान प्राप्त हुआ। आपकी स्मरण-शक्ति बहुत अच्छी है। आप गंजोफा, शतरंज, ताश और चौसर इत्यादि खेल पसंद करते हैं तथा हाकी, फुटबाल, टेनिस इत्यादि के खेल देखने की रुचि रखते हैं। आपने और आपके ज्येष्ठ भ्राता डा० श्यामविहारी मिश्र ने भारत का उद्धार होना कठिन देखकर जापान में जाकर बसने का निश्चय किया था, किंतु सबसे ज्येष्ठ भ्राता पं० शिवविहारीलाल मिश्र ने इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया। आपने कुल ५ वर्ष तक वकालत की, किंतु उससे अच्छी आय किसी वर्ष में नहीं हुई। साहित्य के लिये समय न मिलता हुआ देखकर सं० १९६५ में आपने मुंसिफी कर ली। आप पहले तो खाने-पीने के विषय में बड़े कट्टर थे, किसी के भी हाथ की बनाई पूड़ी नहीं खाते थे, किंतु इनके भतीजे राजकिशोर के अमेरिका से लौटने पर जब बिरादरीवालों ने इनके साथ खानपान का संबंध बंद कर दिया, तब से आप भी अपनी कट्टरता को ढीला करके आवश्यकता पड़ने पर दूसरे के हाथ का भी खा पी लेते थे। कुछ दिनों में आप लोगों का संबंध फिर बिरादरीवालों से हो गया, किंतु नियम जो एक बार ढीला हुआ वह फिर दृढ़ न हो सका।

आपने भारत-भ्रमण भी पर्याप्त रूप में किया है। सं० १९७० में सीतापुर में होनेवाले कान्यकुब्ज कान्फरेंस के आप सभापति थे। सं० १९७२ से १९७८ तक आप छतरपुर राज्य के दीवान रहे। एक साल तक रायबरेली में सब जज थे। २ वर्ष तक छुट्टी पर रहकर आपने काश्मीर की सैर की, फिर छतरपुर के

दीवान हो गए। इस बार आपने कई देशी रियासतों की सैर की। संवत् १९७७ में आपने छतरपुर राज्य की ओर से एक बृहत् चमार-भोज किया, जिसमें २२०० चमार थे। सं० १९८४ में आपको रायबहादुर की उपाधि मिली। स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण आप सं० १९८७ में योरोप गए और इटली, आस्ट्रिया, जर्मनी, हालैंड, इँगलैंड, फ्रांस और स्विटजरलैंड की सैर की। वहाँ से लौटने पर सं० १९८८ में आपने अपने कार्य से पेंशन ले ली।

काम से छुट्टी पाने पर आपने अपने स्वास्थ्य की ओर अधिक ध्यान दिया। दो-दो तीन-तीन घंटे नित्य प्रति पैदल चलते थे। बड़ी कठोरता से संयम का पालन करते थे। वन, पहाड़ और समुद्र की सैर बराबर करते रहे। महीनों तक समुद्र-स्नान किया। इन सबका परिणाम यह हुआ कि आपका स्वास्थ्य सुधर गया। आपने अपने ज्येष्ठ भ्राता डा० श्यामविहारी मिश्र के साथ मिलकर अनेकों ग्रंथ बनाए जिनकी सूची डाक्टर साहब की जीवनी में है। अत: उन्हीं ग्रंथों का फिर यहाँ उल्लेख करना अनावश्यक है। आपने अपने भतीजे पं० प्रतापनारायण मिश्र के साथ कवि-कुल-कंठाभरण की टीका और साहित्य-पारिजात का प्रथम खंड लिखा। पटना विश्वविद्यालय में आपने 'भारतीय इतिहास पर हिंदी-साहित्य का प्रभाव' विषय पर एक व्याख्यानमाला दी जो पुस्तकाकार प्रकाशित हो गई है।

सदा से हिंदी-सेवा की ओर आपकी रुचि रही है और जब तक शरीर करने देगा तब तक सेवा करते रहेंगे। हिंदी के कार्य से आपने लाभ उठाने की बात कभी नहीं सोची, वह केवल स्वांत:-सुखाय ही रही है। आप लखनऊ और प्रयाग विश्वविद्यालय की कोर्ट के मेंबर हैं। आप राजनीतिक तथा सामाजिक कामों में भी भाग लेने लगे हैं। हिंदी की सेवा इन्होंने बड़े उत्साह और परिश्रम से की है।

(११) बाबू हरिकृष्ण 'जौहर'

आपका जन्म भाद्रपद सं० १९३७ को काशी में हुआ था। आप जाति के कोहली खोखरान खत्री हैं। आपके पिता का नाम मुंशी रामकृष्ण जी था। आपकी शिक्षा उर्दू से आरंभ हुई। आरंभ से ही आप बड़े विद्यानुरागी थे। आपने कठिन परिश्रम करके संस्कृत, अँगरेजी, फारसी, उर्दू, बँगला, मराठी तथा गुजराती भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। तेरह वर्ष की अवस्था से ही उपन्यास नाटक लिखकर आपने साहित्य-सेवा आरंभ कर दी। प्रथम दो वर्ष तक तो आप उर्दू में पुस्तकें लिखते रहे। राजे हैरत, हरीफ, पुरअसर जादू आदि नौ उपन्यास तथा नाटक लिखे जो प्रकाशित हुए। जौहर उपनाम आपने तभी धारण किया था। दो साल के बाद आपने सदा के लिये उर्दू से मुँह मोड़ लिया और हिंदी की सेवा में तत्पर हो गए जो अब तक कर रहे हैं।

आपका साहित्यिक जीवन तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम आरंभिक भाग के दो रूप हैं, पूर्वांश तथा उत्तरांश। आपके साहित्यिक जीवन का पूर्वांश काशी के भारत जीवन यंत्रालय से आरंभ होता है। यहीं आपके मानस-क्षेत्र में हिंदी-सेवा के बीज आरोपित हुए। यंत्रालय के स्वामी बाबू रामकृष्ण वर्मा के यहाँ पं० अंबिकादत्त व्यास, पं० नकछेदी तिवारी, लछिराम जी, रत्नाकर जी, कार्त्तिकप्रसाद जी, सुधाकर द्विवेदी जी तथा गोस्वामी किशोरीलाल जी ऐसे उद्भट विद्वानों की बैठक हुआ करती थी। इसी बैठक में जौहर जी भी प्रविष्ट हुए और उन विद्वानों के संसर्ग का यथोचित लाभ उठाया। यन्त्रालय से आपको कई पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इन्हीं दिनों आपने काशी से मासिक पत्र मित्र, उपन्यास तरंग तथा साप्ताहिक 'द्विजराज' पत्रिका

का संपादन किया। कुछ समय के लिये बंबई जाकर श्रीवेंकटेश्वर-समाचार का सहकारी संपादन-कार्य भी कर आए। पत्रों के संपादन-काल में भी आपका पुस्तक-लेखन बराबर जारी रहा। बंबई से लौटकर आपने भारत-जीवन का संपादन-कार्य अपने हाथ में लिया। उस पत्र की कायापलट हो गई। ग्राहक-संख्या एक सौ से बढ़कर सात सौ से अधिक हो गई। इतना अधिक परिश्रम करने पर भी आपका वेतन केवल १५) रु० मासिक था। कुछ इस कारण से और कुछ काशी को अपनी पूर्ण उन्नति के लिये संकुचित समझकर आप सन् १९०२ में कलकत्ते के बंगवासी में सहकारी संपादक होकर चले गए। आपका वेतन २५) रु० मासिक था जो बढ़ते-बढ़ते एक सौ पाँच तक हुआ। तीन मास बाद ही प्रधान संपादक पं० सदानंद जी शुक्ल के अवसर ग्रहण करने पर आप प्रधान संपादक नियुक्त हुए और तब से आपके आरंभिक साहित्यिक जीवन का उत्तरांश आरंभ हुआ, जिसमें आपने अपेक्षाकृत अधिक पुष्ट और उपादेय साहित्य-सेवा की।

बाबू योगेंद्रचंद्र वसु हिंदी वंगवासी, बँगला वंगवासी तथा अँगरेजी दैनिक टेलीग्राफ के स्वामी थे। जौहर जी पर वसु जी की विशेष कृपा रहती थी। उस समय वंगवासी यंत्रालय में एक बड़ी विद्वन्मंडली उपस्थित थी, अतएव वह आपके लिये महाविद्यालय का काम कर रहा था। यहीं पर आपने सहकारी रूप में श्री काशीप्रसाद जी बी० ए०, बी० एल०, राजवंशीय कुमार गणेशसिंह जी भदोरिया, बी० ए०, पं० अंबिकाप्रसाद वाजपेयी, पं० बाबूराव विष्णु पराड़कर, पं० चंदूलाल जी तथा पं० लक्ष्मण नारायण जी गर्दे का संयोग प्राप्त किया। इस समय आपने संपादन के साथ साथ विविध देशीय ऐतिहासिक ग्रंथ लिखे। कुछ धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद भी संपादित किए। आपने एक और महान् कार्य किया। कलकत्ते के रईस श्रीमान् बाबू दामोदरदास खत्री तथा

सर्दार निहालसिंह के सहयोग से कलकत्ता नागरी-प्रचारिणी सभा की स्थापना की, जिसकी सदस्य-संख्या ५०० तक पहुँच गई थी। आपके संपादन-काल में हिंदी वंगवासी ने भी चरमोन्नति प्राप्त की। उसकी ग्राहक-संख्या तीन हजार से बढ़कर सत्रह हजार हो गई। प्रथम यूरोपीय महायुद्ध समाप्त होने के उपरांत आपका मन पत्र-संपादन-कार्य से उचट गया, अत: आपने वह पद त्यागना चाहा। वंगवासी-यंत्रालय के स्वामी वरदाप्रसाद वसु ने बहुत आग्रह किया कि आप वंगवासी से संबंध न तोड़िए, आपका कार्य कुछ न करना पड़ेगा, केवल निरीक्षण कीजिए और आपका वेतन भी क्रमश: बढ़ता रहेगा, किंतु आपका तो मन ही उचट गया था। अत: वंगवासी का १५ वर्षों तक संपादन करके सन् १९१९ में आपने उससे संबंध विच्छेद कर लिया और कलकत्ते के मदन थियेटर्स लिमिटेड के नाटककार नियुक्त हुए। यहीं से आपका प्रथम साहित्यिक जीवन समाप्त होकर द्वितीय आरंभ होता है।

आप व्यावसायिक कंपनियों के अन्य नाटकों की भाँति खिचड़ी भाषा के पक्षपाती न थे। आप शुद्ध हिंदी भाषा के नाटक रंगमंच पर लाना चाहते थे, और इसी उद्देश्य से एक बार आप कलकत्ता नागरी-प्रचारिणी सभा का एक डेपुटेशन लेकर मदन थियेटर्स के स्वामी श्री रुस्तम जी के पास गए थे। सेठ रुस्तमजी ने आपको अपनी कंपनी में स्थायी नाटककार २५० रु० मासिक वेतन पर रख लिया और धीरे धीरे वेतन बढ़ाकर ४०० रु० मासिक तक किया। कंपनी में रहकर आपने भ्रमण खूब किया और श्रेष्ठ कलाकारों के सहयोग में रहे। आपने कंपनी को कई नाटक लिखकर दिए जो अभिनीत हुए और जनता द्वारा पसंद किए गए। आपके कई नाटकों की फिल्में भी आपकी उपस्थिति में बनीं। आपके नाटकों की भाषा बड़ी विशुद्ध तथा मधुर होती थी। सन् १९३१ तक आप मदन कंपनी में रहे। इसी वर्ष सेठ रुस्तम जी का

स्वर्गवास हो गया। इस दुर्घटना से आपको बड़ा दुःख हुआ और आपने मदन कंपनी को भी त्याग दिया। मदन कंपनी छोड़कर आप काशी आ गए। यहाँ से आपका द्वितीय साहित्यिक जीवन समाप्त होकर तृतीय आरंभ होता है।

काशी में रहकर भी आप समय समय पर विभिन्न सिनेमा कंपनियों का काम ठेके पर करने के लिये बंबई या कलकत्ते चले जाया करते। कलकत्ते के पायनियर फिल्म्स के लिये खुदादाद, माँ आदि कितनी ही कथाएँ लिखीं। इसी समय द्वितीय यूरोपीय महायुद्ध की घनघटा देखकर आपने काशी (मामूरगंज) के अपने हिंदी प्रेस से 'आधार' नामक एक हिंदी साप्ताहिक पत्र निकाला, जिसे हिटलर-चेम्बरलेन का समझौता हो जाने पर बंद कर दिया। सन् १९३८ में आप कलकत्ते के सीताराम मूवीटोन के कर्मवीर फिल्म के संबंध में बंबई गए। उसी समय द्वितीय यूरोपीय महासमर की घटा एक बार फिर सघन देखकर श्रीवेंकटेश्वर-समाचार की सेवा में प्रवृत्त हो गए। प्रथम यूरोपीय महायुद्ध की समाप्ति पर जिस पत्र-संपादन-कार्य को आपने त्याग दिया था, उसी कार्य को द्वितीय महायुद्ध के आरंभ में फिर ग्रहण किया। अब तक आप उसी पत्र का संपादन कर रहे हैं। इस प्रकार आपका सारा जीवन हिंदी-सेवा में बीता और बीत रहा है।

आपका ही कहना है और खूब कहना है :—

कट गई जिंदगी साहित्य की गुलकारी में,
तीसरापन है इसी बाग की फुलवारी में।

आपके ग्रंथ निम्नांकित हैं :—

उपन्यास—१ कानिस्टेबुल-वृत्तांतमाला, २ भूतों का मकान, ३ नर-पिशाच, ४ भयानक भ्रमण, ५ मयंकमोहिनी, ६ शीरी फरहाद, ७ जादूगर।

ऐतिहासिक— ८. अफगानिस्तान का इतिहास, ९ जापान-वृत्तांत, १० देशी राज्यों का इतिहास, ११ रूस-जापान-युद्ध, १२ सागर साम्राज्य, १३ सिक्ख इतिहास, १४ नेपोलियन बोनापार्ट।

फुटकर—१५ हाजी बाबा, १६ सर्वे सेटेलमेंट, १७ ट्रांसलेशन एंड रीट्रांसलेशन, १८ भूगर्भ की सैर, १९ विज्ञान और बाजीगर, २० कबीर मंसूर।

संपादित अनुवाद— २१. श्रीमद्भागवत, २२ महाभारत, २३ अध्यात्म रामायण, २४ कल्कि पुराण, २५ मार्कंडेय पुराण, २६ काशी, २७ याज्ञवल्क्य संहिता, २८ अत्रि संहिता, २९ हारीत संहिता।

नाटक—३०. सावित्री सत्यवान, ३१ पतिभक्ति, ३२ प्रेमयोगी, ३३ वीर भारत, ३४ कन्या-विक्रय, ३५ चंद्रहास, ३६, सती-लीला, ३७ भार्या-पतन, ३८ प्रेम-लीला, ३९ औरत का दिल, ४० ऊषा-हरण, ४१ देश का लाल, ४२ शालिवाहन।

---

(१२) पंडित अंबिकाप्रसाद वाजपेयी

आपका जन्म पौष शुक्ल १४ सं० १९३७ (३० दिसंबर, १८८०) को कानपुर के कान्यकुब्ज ब्राह्मण घराने में हुआ था। आपके पितृव्य तो परंपरागत संस्कृत के पंडित थे, किंतु आपके पिता कंदर्पनारायण जी अधिक न पढ़ सके। थोड़ी सी शिक्षा से काम न चलता देखकर उन्होंने महाजनी सीखी और कलकत्ते चले गए। पहले तो कुछ दिनों तक नौकरी करते रहे, फिर दलाली करने लगे। किंतु परिवार को कलकत्ते न ले गए। आप साल में दो-एक बार कानपुर आ जाया करते थे।

उन दिनों उर्दू फारसी जाननेवाले अदालतों की नौकरी कर अधिक कमा लेते थे। यही विचार कर आपके अभिभावकों ने अक्षरारंभ आरंभ कराकर भी उर्दू फारसी की शिक्षा देने के लिये एक मौलवी साहब को नियत कर दिया। बीच में कभी कभी कोई ए बी सी डी आरंभ करा देता था। १४ अक्टूबर सन् १८८९ को आपके चचेरे भाई उमावर जी ने घर से थोड़ी दूर पर ब्राह्मण स्कूल स्थापित किया। उसी स्कूल में लगभग एक वर्ष तक पढ़कर आप बनारस चले आए और फिर यहाँ से भी एक वर्ष बाद लौट गए। कुछ दिन घर में पढ़कर आप कलकत्ते चले गए। वहाँ कुछ दिनों घर पर और कुछ दिन एक स्कूल में पढ़ने के उपरांत हेयर स्कूल में भर्ती हुए। अधिक दिनों तक वहाँ भी न टिक सके और फिर कानपुर आकर जिला स्कूल में भर्ती हो गए। वहीं से सन् १९०० में एंट्रेंस पास किया। हेयर स्कूल के अध्यापक श्री दीनानाथ डे और कानपुर के जिला स्कूल के हेडमास्टर की शिक्षा से आपमें देश की स्वाधीनता के संबंध में विचार उत्पन्न हुए। कलकत्ते में उर्दू फारसी ही पढ़ते थे, तब तक हिंदी में केवल चिट्ठी लिख लेते थे। मास्टर दीनानाथ डे की लिखी हिंदी-पुस्तक शिक्षामणि से आपका हिंदी की ओर प्रेम हुआ। वहाँ से जब कानपुर आए तब तो उर्दू फारसी को आखिरी सलाम कर लिया।

जिस वर्ष आपने एंट्रेंस पास किया, उसी वर्ष आपकी माता और ज्येष्ठ भ्राता का देहांत हो गया। आपके पिता बड़े शोक और संकट में पड़ गए। कालेज की पढ़ाई तो आपके लिये असंभव हो गई। दुखी और वृद्ध पिता की सहायता के विचार से आप पढ़ाई का ध्यान छोड़कर कमाने की चिंता करने लगे। सेक्रेटेरिएट क्लर्कशिप की परीक्षा में बैठे किंतु असफल रहे। इलाहाबाद बैंक की नौकरी कलकत्ते में काम करने के लिये मिली किंतु उतनी दूर जाने की इच्छा न थी। कई महीने इधर-उधर

भटकने के अनंतर फिर वसी नौकरी की इच्छा की। शीघ्र तो न मिली किंतु कुछ प्रयत्न से मिल गई। कलकत्ते में ३ वर्ष नौकरी करने के पश्चात् आपने इस्तीफा दे दिया।

आपकी इच्छा समाचारपत्र में काम करने की थी। हिंदी बंगवासी उन दिनों बड़ी धूम से निकल रहा था। उसके मैनेजर शिवबिहारीलाल जी आपके भतीजे होते थे। आपने उनसे संपादकीय विभाग में काम करने की इच्छा प्रकट की। कई महीनों के बाद जगह मिल गई। वेतन तो बैंक की नौकरी से पाँच रुपया कम था, किंतु मन का काम होने से आपने संतोष कर लिया।

वहाँ से आवश्यक बातें सीखकर आप हट गए, किंतु संपादन-कार्य और समाचारपत्रों से अनुराग बना रहा। राजनीतिक आंदोलन के कारण उत्साह भी उत्तरोत्तर बढ़ता गया। सन् १९०७ से १९१० तक का समय दो प्रकार के कामों में बीता। एक तो यूरोपियनों और बंगालियों को हिंदी पढ़ाने में, दूसरे संपादन करने में। कुछ दिनों तक बंगाल नेशनल कालेज में हिंदी के लेक्चरर का काम किया और 'नृसिंह' नामक मासिकपत्र निकाला। किंतु अर्थाभाव के कारण पत्र एक वर्ष से अधिक न चल सका। सन् १९११ में भारतमित्र के मालिक ने संपादन का पूरा भार आपको सौंप दिया। आप बड़े उत्साह से काम करने लगे। आपकी इच्छा दैनिक पत्र निकालने की थी, अतः भारतमित्र का दैनिक संस्करण दिल्ली दरबार के अवसर पर प्रकाशित किया। आपको बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता था। कई कठिनाइयों के कारण वह बंद हो गया और सूचना निकली कि आगामी वर्ष से स्थायी रूप से निकलेगा। दिन में लगभग १८-१८ घंटे लगातार काम करने के कारण आपका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। धीरे धीरे पराड़करजी, यशोदानंदन अखौरी तथा बदरीनाथ वर्मा आदि साहित्यिकों को आपने अपने पास बुला लिया।

महासमर के अवसर पर सभी साथी तितर-बितर हो गए। पराड़कर जो क्रांतिकारी होने के संदेह में बंदी कर लिए गए। इसी समय भारतमित्र के मालिक से व्यवस्था-संबंधी किसी बात पर आपकी कहा-सुनी हो गई, जिसके कारण सन् १९१९ में आप भारतमित्र से संबंध तोड़ कर चिकित्सा कराने के लिये काशी चले आए। सन् १९२० में आपने अनेक मित्रों के सहयोग से 'स्वतंत्र' पत्र निकाला, जो खूब जोरों से चला। सन् १९३० में पत्र से सरकार ने ५००० रु० की जमानत माँगी। जमानत न देकर पत्र बंद कर दिया गया। इसके बाद आपने अध्ययन आरंभ किया। दादाभाई नौरोजी, रमेशचंद्र दत्त, विलियम बोल्ट आदि के ग्रंथों से अपनी जानकारी बढ़ाई। राजनीति तथा अर्थशास्त्र के ग्रंथ पढ़े। संस्कृत में भी दंडनीति के कई ग्रंथ पढ़े। राष्ट्रीय शिक्षा और मित्र देशों की शासन-पद्धतियों का भी अध्ययन किया। आयरलैंड की स्वाधीनता के आंदोलन के प्रत्येक रूप का बड़ी सावधानी से विचार किया। और भी अन्य देशों की स्वतंत्रता के इतिहास पढ़े।

सन् १९०४ से ही आपका विचार हिंदी का एक अच्छा व्याकरण लिखने का था, किंतु पता चला कि हिंदी और संस्कृत के सामान्य ज्ञान से यह काम नहीं हो सकता। उसके लिए प्राकृत का जानना भी आवश्यक है। अतः आपने वररुचि का प्राकृत-प्रकाश पढ़ा। आप विभक्ति को प्रकृति से मिलाकर लिखने के पक्ष में हैं, इसके लिये एक लेख माला लिखकर आपने तैयार की जो पराड़कर जी द्वारा संपादित हितवार्ता पत्रिका में छपी थी। व्याकरण लिखने के लिये हेमचंद्र कृत प्राकृताष्टाध्यायी भी आपने देखी। विदेशी और स्वदेशी लेखकों के हिंदी-व्याकरणों की पर्यालोचना करके १५ वर्ष बाद सन् १९१९ में आपने हिंदी कौमुदी लिखी। ज्यों ज्यों इसके संस्करण होते जाते हैं, त्यों त्यों इसका

सुधार होता जाता है। इस समय इसका छठा संस्करण चल रहा है।

सन् १९२८ में कलकत्ता युनिवर्सिटी ने आपको मैट्रिक कक्षा की हिंदी का परीक्षक बनाया और सन् १९३० में एम० ए० का। एम० ए० की परीक्षा के प्रश्न का विषय था हिंदी-साहित्य पर फारसी का प्रभाव। उस विषय पर कोई पुस्तक न थी, अतः आपने एक पुस्तक लिखा जो अँगरेजी का रूप धारण करके युनिवर्सिटी से ही प्रकाशित हुई। उसी को हिंदी-साहित्य-सम्मेलन ने हिंदी में प्रकाशित किया। आपके प्रकाशित ग्रंथ ये हैं:—

१. हिंदी-कौमुदी, २ हिंदी पर फारसी का प्रभाव, ३ अभिनव हिंदी-व्याकरण, ४ शिक्षा (अनुवाद), ५ हिंदुओं की राज-कल्पना, ६ भारतीय शासन-पद्धति।

इसके अतिरिक्त आपने अनेक लेख, निबंध तथा समालोचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में लिखी हैं। काशी में २६वें अखिल भारतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के आप सभापति चुने गए थे।

---

(१३) पंडित गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'

आपका जन्म श्रावण शुक्ल १३ सं० १९४० में उन्नाव जिले के हड़हा नामक ग्राम में हुआ था। आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। आपके पिता पं० अवसेरीलालजी शुक्ल गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से थे। बाल्यावस्था में ही आपके पिता का देहांत हो गया। आपके चचेरे भाई पं० लालप्रसाद शुक्ल ने बड़े स्नेह के साथ आपका लालन पालन किया।

आपकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में ही हुई। चौथी श्रेणी पास कर और छात्रवृत्ति पाकर आप पुरवा टाउन स्कूल में

भरती हुए। वहाँ से आपने सन् १८९७ ई० प्रथम श्रेणी में वर्नाक्यूलर फाइनल परीक्षा पास की। मिडिल पास करके आप गाँव में ही फारसी का अध्ययन करने लगे। सौभाग्य से हिंदी तथा फारसी के मर्मज्ञ कवि लाला गिरधारीलाल जी श्रीवास्तव पेंशन पाकर अपने जन्मस्थान हड़हा को गए। लालाजी के परिचय और संपर्क से आपकी रुचि कविता की ओर बढ़ी और उन्हीं से आप साहित्य की शिक्षा प्राप्त करने लगे।

एक बार आपकी भेंट उर्दू के प्रसिद्ध कवि मुंशी रामसहाय जी 'तमन्ना' (शिक्षा विभाग उन्नाव के डिप्टी इंसपेक्टर) से हो गई। तमन्ना जी ने आपसे अध्यापकी कर लेने का अनुरोध किया, क्योंकि अध्यापकी में पठन-पाठन का अच्छा अवसर मिलता है। अतः आपने १५ या १६ वर्ष की ही अवस्था में अध्यापकी कर ली और तमन्ना जी की कृपा से शीघ्र ही आप शिक्षा प्राप्त करने के लिये नार्मल स्कूल लखनऊ भेज दिए गए। वहाँ आप अपनी मधुर कविताओं से सबको मोहित करते रहे। वहीं पर मौलाना सैयद इब्राहिमहुसेन नाजिम से कुछ सीखने का भी आपको अवसर मिला।

नार्मल स्कूल से लौटने पर आप सफीपुर में फाइनल स्कूल के सेकेंड मास्टर नियुक्त हुए। वहाँ के उर्दू मुशायरे में आप सदा भाग लेते थे। उन्नाव में जब फाइनल स्कूल खुला तब ये उन्नाव चले गए और अपने शुभचिंतक तथा कृपालु तमन्ना जी के संसर्ग से उर्दू की अच्छी कविता करने लगे। हिंदी पत्रों में जैसे रसिक मित्र, रसिक-रहस्य, काव्य-सुधानिधि और साहित्य-सरोवर आदि में भी पुराने ढंग की कविता लिखते थे। हिंदी में आपका उपनाम 'सनेही' और उर्दू में 'त्रिशूल' है।

आपने 'प्रताप' पत्र में कृषक-क्रंदन नाम की बड़ी ही करुण कविता भेजी, जिसे लोगों ने बहुत सराहा। पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी ने

भी उसे देखा और उसकी बहुत प्रशंसा की। द्विवेदी जी ने आपको 'सरस्वती' में लिखने का आदेश दिया जिस पर आपने दहेज की कुप्रथा नामक कविता सन् १९१४ में सरस्वती में भेजी। इसकी अच्छी प्रशंसा हुई। द्विवेदी जी के प्रोत्साहन और उत्तेजना से फिर आपने सरस्वती में एक से एक उत्तम कविताएँ छपवाईं। द्विवेदी जी की कृपा से आपकी भाषा और भी परिमार्जित तथा विशुद्ध होने लगी। हिंदी के प्रसिद्ध कवि श्रीयुत पं० नाथूराम शंकर शर्मा जी रसिकमित्र में आपकी कंसवध नामक कविता देखकर बड़े प्रसन्न हुए और बधाई के साथ-साथ संपादक को यह लिखा कि आपने सनेही जी को प्रथम स्थान न देकर उनके साथ अन्याय किया है।

सन् १९१६ में आप बाँगरमऊ के स्कूल में काम करते थे। वहाँ के ताल्लुकेदार रायबहादुर चौधरी महेंद्रसिंह आनरेरी मजिस्ट्रेट व मुंसिफ से आपका बहुत प्रेम बढ़ा। चौधरी साहब कविता के प्रेमी और मर्मज्ञ थे। कई बार आपने तत्काल ही समस्याओं की उत्तम पूर्ति करके चौधरी साहब को मुग्ध कर लिया था। निदान एक बार चौधरी साहब ने एक दरबार करके आपको स्वर्णपदक और द्रव्यादि देकर सम्मानित किया। चौधरी साहब ने कहा कि इसकी आवश्यकता का अनुभव मैं बहुत दिनों से कर रहा था। आज मुझे शांति मिली। साथ ही साथ यह भी कहा कि उर्दू में हमारे सनेही जी चकबस्त हो हैं। कुछ दिनों तक आप उन्नाव ट्रेनिंग स्कूल के हेडमास्टर थे।

आपका ध्यान पुस्तक-रचना की ओर कम गया है, विशेष कर आप फुटकर कविताएँ ही लिखते रहे। आपकी रचित स्तकें ये हैं—

१ प्रेम-पचीसी, २ कुसुमांजलि, ३ कृषक-क्रंदन, ४ मानसतरंग, ५ करुण भारती।

आजकल आप नौकरी से अवकाश ग्रहण करके कानपुर में रहते हैं और साहित्य-सेवा करते हैं। भरतपुर में हुए हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन के आप सभापति थे। इस समय 'सुकवि' नामक कविता-संबंधी मासिक पत्र के संपादक तथा संचालक हैं।

आप स्वभाव के अत्यंत सरल, सहिष्णु तथा प्रेमी हैं। आपकी कविता भावपूर्ण तथा हृदयग्राहिणी होती है। आपको करुण रस बहुत अधिक प्रिय है।

---

(१४) पंडित बाबूराव विष्णु पराड़कर

आपका जन्म कार्तिक शुक्ल ६ मंगलवार सं० १९४० को काशी में हुआ था। आप महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं। आपके पिता किसी कारणवश १० वर्ष की अवस्था में पूना से काशी चले आए थे। यहीं विद्यालाभ करके वे शास्त्री हुए, फिर बिहार के सरकारी स्कूलों में हेड पंडित रहे। अतः पराड़कर जी की शिक्षा बिहार में, विशेषत: भागलपुर में ही, हुई। संस्कृत की शिक्षा तो आपको मिली ही, इंटरमीडिएट तक अँगरेजी भी आपने पढ़ी। जब आप १५ वर्ष के थे तभी आपके पिता का देहांत हो गया, फिर भी आपका अध्ययन चलता रहा। १७-१८ वर्ष की अवस्था में आपने भागलपुर से इंटर पास किया और काशी आ गए। उन दिनों काशी में भयंकर प्लेग फैला हुआ था, जिसमें आपकी माता तथा कई बहिनों का देहांत हो गया। घर में बड़े कहाने के लिये आप ही रह गए। जीविका का प्रश्न सामने आने पर एक महाजन के यहाँ ट्यूशन कर लिया।

छात्रावस्था में आप हिंदी के संपर्क में उतना नहीं आए थे। कभी कभी सामने पड़ जाने पर 'बंगवासी' देख लिया करते थे। किंतु काशी में रहकर इन दिनों आपने हिंदी का खूब अध्ययन किया। काशी नागरीप्रचारिणी सभा के पुस्तकालय ऐसा बृहत् क्षेत्र अध्ययन के लिये आपको मिला। आप नित्य प्रति एक पुस्तक ले जाते थे और दूसरे दिन लौटा देते थे। उन दिनों पुस्तकाध्यक्ष थे पं० गोविंदप्रसाद शुक्ल। इस प्रकार पुस्तकें लेते और लौटाते देखकर एक दिन उन्होंने आपसे पूछा, कुछ पढ़ते भी हो या लौटाने के लिये ही पुस्तक ले जाते हो। आपने उत्तर दिया कि सप्ताह के भीतर पढ़ी हुई किसी भी पुस्तक के विषय में आप प्रश्न करें तो परीक्षा हो जाय। एक दिन शुक्ल जी ने अपनी समझ से एक कठिन पुस्तक के विषय में प्रश्न किया। आपने उस प्रश्न का उत्तर दिया और उस पुस्तक का समस्त इतिवृत्त बता गए। इस पर वे बड़े प्रसन्न हुए।

प्रसिद्ध पत्रकार पंडित सखाराम देउस्कर दूर के संबंध से आपके मामा लगते थे। जब आप ७ वीं कक्षा में पढ़ रहे थे तभी देउस्कर जी ने अकबर और औरंगजेब का उदाहरण देकर समझाया कि कपटी मित्र से प्रकट शत्रु अच्छा होता है। केवल किताबी बातों पर ही निर्भर मत रहो, उसकी बातों को सोचकर उसकी गहराई तक पहुँचो। उन्हीं ने बताया कि वर्तमान अँगरेजी राज्य की नीति अकबर की नीति के समान है। इस बात का प्रभाव आप पर बहुत पड़ा और राजनीतिक रुचि उत्पन्न हुई।

एक बार आपने कलकत्ते के हिंदी बंगवासी पत्र में सहायक संपादक की आवश्यकता की सूचना पढ़ी। आपने एक प्रार्थनापत्र भेज दिया जो स्वीकार कर लिया गया। देउस्कर जी को जब यह मालूम हुआ तो उन्होंने आपको लिखा कि आकर हमारे यहाँ ही रहो। देउस्कर जी 'हितवादी' बँगला पत्र के संपादक थे। सन्

१९०६ में आप वंगवासी में चले गए। कलकत्ते में देउस्कर जी का संपर्क पाकर आपने बहुत अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त किया। अधिक दिनों तक आप वंगवासी में न रह सके। उन दिनों प्रायः सभी पत्रों में सनातनधर्म तथा आर्यसमाज के झगड़े का प्रधानता रहती थी और आप इनसे दूर रहकर मौलिक विचारों के प्रकाशन के पक्ष में थे। सन् १९०७ में आप वंगवासी छोड़कर 'हितवार्ता' में संपादक होकर आ गए। बँगला हितवादी के साथ-साथ वहीं से हिंदी में 'हितवार्त्ता' भी निकलती थी। देउस्कर जी ने कहा कि देखो तुम बँगला हितवादी का ढर्रा मत पकड़ना ; तुम स्वयं अपने विचार प्रकट करना, केवल मुझे सुना भर दिया करना। उसी समय आपको हिंदी के दो विद्वानों—पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र तथा पं० गोविंदनारायण मिश्र—का साहचर्य प्राप्त हुआ।

कुछ समय बाद स्वदेशी आंदोलन आरंभ हुआ और सभी पत्रों का रुख उस ओर हुआ। बंगाल का स्वदेशी आंदोलन अपने यौवन पर था। हितवार्त्ता में राजनीति पर अधिक विचार-पूर्ण लेख निकलने लगे। पराड़कर जी स्वयं उग्र मत के थे। उन्हीं दिनों बंगाल नेशनल कालेज खुला, जिसमें आप अध्यापक हो गए। सन् १९१० में 'भारत-मित्र' दैनिक हुआ, जिसमें आप सम्मानपूर्वक बुलाए गए। भारत-मित्र में आप साढ़े पाँच वर्षों तक काम करते रहे। उसी संपादन, काल में, क्रांतिकारी होने के संदेह में आप दो वर्ष तक गाँवों में नजरबंद रखे गए और २ वर्ष तक आपको कारागार का दंड भोगना पड़ा।

सन् १९२० में आप कारागार से मुक्त होकर सीधे काशी चले आए और 'आज' के संपादक नियुक्त हुए। तब से अब तक आप वहीं हैं। आपके विद्वत्तापूर्ण लेखों के कारण 'आज' की कैसी उन्नति हुई है यह किसी से छिपा नहीं है। अखिल भारतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन का २७वाँ अधिवेशन शिमला में आपके ही

सभापतित्व में हुआ था। आप बातचीत में अकृत्रिम, सामाजिकता में सुसंस्कृत, स्नेहपरायण तथा कर्मठ व्यक्ति हैं।

---

(१५) पंडित रूपनारायण पांडेय

आपका जन्म लखनऊ के रानीकटरे में आश्विन शुक्ल १२ सं० १९४१ को हुआ था। आप उत्तम कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। आपके पिता का नाम पं० शिवराम पांडेय था जो आपको एक ही वर्ष की अवस्था में छोड़कर परलोक सिधारे। अतएव आपके बाबा पं० रामअधार पांडेय ने बड़े प्रेमपूर्वक आपका पालन-पोषण किया।

आपका विद्यारंभ घर पर ही हुआ। पहले-पहल आपको संस्कृत की शिक्षा दी जाने लगी। समयानुसार आपने कैनिंग कालेज से प्रथमा की परीक्षा पास की और मध्यमा परीक्षा की तैयारी करने लगे। मध्यमा पास करने के पूर्व ही आपके एकमात्र पालक बाबा का भी देहांत हो गया, अतः गृहस्थी का सारा भार आप पर पड़ गया, जिसके कारण पढ़ाई से हाथ खींचकर आपको नौकरी ढूँढ़नी पड़ी। नौकरी तो कर ली, किंतु विद्याभ्यास निरंतर करते रहे। यह विद्याभ्यास परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिये न था, वरन् ज्ञानोपार्जन के निमित्त था। इस प्रकार का विद्याभ्यास अब तक बराबर चला जा रहा है। पुराने विचारों के होने के कारण, धर्मभ्रष्ट होने के भय से, आपके बाबा ने आपको अँगरेजी की अधिक शिक्षा नहीं दिलाई थी। किंतु फिर भी आपने अपने परिश्रम से, तीव्रबुद्धि होने के कारण, उसका भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

स्कूल में तो आपको बहुत थोड़ी शिक्षा मिली है, आपने जो कुछ भी योग्यता प्राप्त की है वह अपने निजी परिश्रम और

पुस्तकावलोकन का फल है। आपने एक ही सप्ताह में बँगला भाषा सीखी थी। मराठी, गुजराती और उर्दू को भी स्वयं सीखकर साधारण ज्ञान प्राप्त कर लिया है। बचपन से ही आपकी रुचि साहित्य की ओर है। जब आप १५ वर्ष के थे तभी से कुछ न कुछ लिखना आरंभ कर दिया था।

पहले कुछ दिनों तक आप बाबू कालीप्रसन्न सिंह सब-जज के यहाँ रहकर कृत्तिवास रामायण का पद्यानुवाद करते रहे। उसके पीछे ७ वर्ष तक नागरी-प्रचारक पत्र का संपादन किया। ३ वर्ष तक भारतधर्म-महामंडल की मुखपत्रिका निगमागमचंद्रिका का संपादन किया। उसके अनंतर २ वर्ष तक आपने 'इंदु' मासिक पत्र के संपादन-विभाग में काम किया। यहाँ से आपको 'इंदु' रौप्य पदक मिला। फिर १ वर्ष तक इंडियन प्रेस, प्रयाग में रहे। २ वर्ष तक 'कान्यकुब्ज' मासिक पत्र का संपादन किया। लखनऊ से माधुरी निकलवाकर ५ वर्ष तक उसके संपादक रहे। आजकल फिर आप 'माधुरी' के संपादक हैं।

आपका प्रायः सभी समय संपादन में ही बीता, अतः आप संपादन-कला में विशेष पटु हो गए हैं। संपादन-कार्य के साथ-साथ आप पुस्तक लिखने का भी कार्य करते रहे। आपकी अधिक पुस्तकें अनुवादित हैं और विशेषकर बँगला के प्रसिद्ध उपन्यासों और नाटकों के अनुवाद हैं। अब तक आपकी मौलिक और अनुवादित पुस्तकों की संख्या १०० तक पहुँच चुकी है। आप समय समय पर प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में गद्य तथा पद्य भी लिखते थे। आपके गद्य-लेखों की संख्या लगभग २०० और कविताओं की संख्या लगभग १०० है। आपके गद्य तथा पद्य दोनों प्रकार के लेख सरस और सुपाठ्य होते हैं। आप बड़े ही विद्याव्यसनी और मिलनसार हैं। आपका समय साहित्यिक चर्चा

में ही बीतता है, आपकी लिखित तथा अनुवादित मुख्य पुस्तकें ये हैं:—

१ शुकोक्ति-सुधासागर, २ आँख की किरकिरी, ३ शांतिकुटीर, ४ चौबे का चिट्ठा, ५ दुर्गादास, ६ उस पार, ७ शाहजहाँ, ८ नूरजहाँ, ९ सीता, १० पाषाणी, ११ सूम के घर धूम, १२ भारतरमणी, १३ बंकिम-निबंधावली, १४ ताराबाई, १५ ज्ञान और कर्म, १६ विद्यासागर, १७ बाल-कालिदास, १८ बाल-शिक्षा, १९ तारा, २० राजा-रानी, २१ घर बाहर, २२ भूप्रदक्षिण, २३ गल्प-गुच्छ, ५ भाग, २४ समाज, २५ शिक्षा, २६ महाभारत, के कतिपय पर्व, २७ रमा, २८ पतित पति, २९ शूरशिरोमणि, ३० हरीसिंह नलवा, ३१ गुप्त रहस्य, ३२ खाँजहाँ, ३३ मूर्खमंडली, ३४ मंजरी, ३५ कृष्णाकुमारी, ३६ बंकिमचंद्र, ३७ अज्ञातवास, ३८ बहता हुआ फूल, ३९ पोष्य पुत्र, ४० चंद्रप्रभ-चरित, ४१ पृथ्वीराज, ४२ प्रफुल्ल, ४३ शिवाजी, ४४ वीरपूजा, ४५ नारी-नीति, ४६ आचारप्रबंध, ४७ घर जमाई, ४८ स्वतंत्रता देवी, ४९ नीति-रत्न-माला, ५० भगवतीशतक, ५१ शिव-शतक, ५२ रंभा-शुक-संवाद, ५३ पत्र-पुष्प, ५४ दुरंगी दुनिया, ५५ गोरा, ५६ बुद्ध-चरित, ५७ खोई हुई निधि, ५८ गृह-लक्ष्मी, ५९ विजया, ६० पराग, ६१ अशोक नाटक, ६२ पद्मिनी नाटक, ६३ सचित्र हिंदी भागवत, ६४ सुबोध बाल भागवत, ६५ प्रतापी परशुराम, ६६ महारथी अर्जुन, ६७ महावीर हनुमान् और गजरा।

---

(१६) बाबू मैथिलीशरण गुप्त

आपका जन्म श्रावण शुक्ल द्वितीया चंद्रवार संवत् १९४३ को चिरगाँव, झाँसी में हुआ था। आपके पिता का नाम सेठ श्री रामचरण जी था, जो बड़े कविता-प्रेमी तथा स्वयं भी कवि थे। आपकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई और फिर कुछ दिनों तक आपने गाँव के स्कूल में शिक्षा पाई, किन्तु बहुत दिनों तक आप स्कूल में नहीं पढ़ सके, घर ही पर विद्याभ्यास करते-करते साहित्य की अच्छी-अच्छी पुस्तकें देखने लगे। संस्कृत की शिक्षा तो घर पर आपको मिली, किंतु मराठी और बँगला भाषा इन्होंने स्वतः परिश्रम करके सीखी है और उनका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

आप पर आपके पिता का अच्छा प्रभाव पड़ा और बचपन से ही साहित्य की ओर आपकी रुचि हुई। भगवान् की दया से आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी थी, जिससे आपको रोटी कमाने की चिंता नहीं हुई। आपने बहुत पहले से ही छोटी-मोटी कविता लिखनी प्रारंभ की, फिर आगे चलकर छोटे-छोटे खंडकाव्य लिखने लगे। आपके ग्रंथ लोकप्रिय हुए और नवयुवकों ने उनका अच्छा आदर किया। इस प्रकार जनता द्वारा उत्साहित होकर आपने अनेक ऐतिहासिक, सामाजिक तथा पौराणिक कथाओं को छंदोबद्ध किया। देश की दशा की ओर भी आपका ध्यान गया और देशप्रेम में विह्वल होकर आपने भारत-भारती, स्वदेश-संगीत और हिंदू जैसे ग्रंथ रचे जो समाज द्वारा प्रशंसित हुए।

आप प्रबंध-काव्य लिखने में बड़े पटु हैं। आपके ग्रंथों में घटना-वर्णन और भावाभिव्यंजन दोनों विशेष रूप में पाए जाते हैं। आप सभी रसों का आविर्भाव बड़ी कुशलता से कर सकते हैं। जयद्रथ-वध इसका एक अच्छा उदाहरण है, जिसमें शांत, करुण,

वात्सल्य, रौद्र, वीर तथा बीभत्स आदि रसों का अच्छा सम्मिश्रण है। आपकी रचना व्याकरण-सम्मत और विशुद्ध होता है। पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी से आपको बहुत प्रोत्साहन मिला, जिससे कविता की ओर रुचि बढ़ी और उसमें आपने आशातीत उन्नति की। वर्तमान हिंदी कवियों में आपका नाम विशेष आदरणीय है। आपकी आधुनिक रचनाओं में 'साकेत' महाकाव्य है, जिस पर आपको मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला है। आप बड़े सरल, मिलनसार, शुद्धप्रकृति और मिथ्याभिमान-रहित व्यक्ति हैं। आपकी आयु के पचासवें वर्ष के पूरे होने पर काशी में बड़ी धूम से आपकी जयंती मनाई गई थी। आपके रचित तथा अनुवादित मुख्य ग्रंथ ये हैं :—

१ साकेत, २ भारत-भारती, ३ जयद्रथ-वध, ४ गुरुकुल, ५ हिंदू, ६ पंचवटी, ७ अनघ, ८ स्वदेश-संगीत, ९ बक-संहार, १० वन-वैभव, ११ सैरंध्री, १२ त्रिपथगा, १३ झंकार, १४ शक्ति, १५ विकट भट, १६ रंग में भंग, १७ किसान, १८ शकुंतला, १९ पद्यावली, २० वैतालिक, २१ गुरु तेगबहादुर, २२ यशोधरा, २३ द्वापर, २४ सिद्धराज, २५ मंगल घट, २६ वीरांगना, २७ विरहिणी व्रजांगना, २८ पलासी का युद्ध, २९ स्वप्न-वासवदत्ता, ३० मेघनाद-वध, ३१ रुबाइयात उमर ख़य्याम, ३२ चंद्रहास, ३३ तिलोत्तमा, ३४ त्रिशंकु, ३५ नहुष, ३६ शांति, ३७ आस्वाद, ३८ गृहस्थगीत।

---

(१७) पंडित लोचनप्रसाद पांडेय

आपका जन्म पौष शुक्ल १० मंगलवार सं० १९४३ में महानदी-तटस्थ बालपुर ग्राम में हुआ था। आपके पूर्वज युक्तप्रांत से गए थे। आपके पितामह पंडित शालग्राम पांडेय संबलपुर जिले के प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। आपके पिता का नाम पंडित चिंतामणि पांडेय तथा माता का नाम देवदूती देवी था। आपके पिता जी तथा ज्येष्ठ भ्राता पंडित पुरुषोत्तमप्रसाद पद्य-रचना करते थे। आप पर उनका पर्याप्त प्रभाव पड़ा। अपने पिता द्वारा स्थापित ग्राम की पाठशाला में हिंदी की शिक्षा समाप्त करके आप संबलपुर हाईस्कूल में भरती हुए और वहीं से कलकत्ता-विश्वविद्यालय की एंट्रेंस परीक्षा संस्कृत लेकर सन् १९०५ में पास की। जब आप एंट्रेंस के छात्र थे तभी आपने बनारस के सेंट्रल हिंदू कालेज मैगजीन में 'Tobacco and Students' शीर्षक एक छोटा सा लेख लिखा था, जिसे देखकर उनके शिक्षकगण अत्यंत प्रसन्न हुए थे। उसके थोड़े दिनों बाद आपने भारतवर्ष के कई देशभक्तों की संक्षिप्त जीवनियाँ भी उसी मैगजीन में छपाईं, जिसकी प्रशंसा विदुषी ऐनी बेसेंट ने की थी और आपके पास प्रशंसापत्र लिखा था। पांडेय जी को बहुत उत्साह मिला। वे तब से निरंतर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख छपवाते रहे।

सन् १९०६ में आप उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये काशी आए। यहाँ भारत-जीवन के संपादक बाबू रामकृष्ण वर्मा के दर्शन हुए। प्रयाग में पंडित बालकृष्ण भट्ट तथा सुकवि-शिरोमणि श्रीधर पाठक से आपने भेंट की। सन् १९०६ में अपने पिता के साथ नेशनल कांग्रेस में कलकत्ता गए, जहाँ अनेक देश-भक्त विद्वानों से आपका परिचय हुआ तथा उनके भाषण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। उस कांग्रेस का आप पर बहुत प्रभाव

पड़ा। वहाँ से लौटकर आप देशप्रेम-पूर्ण कविताएँ लिखने लगे। समय-समय पर सरस्वती, कमला, देवनागर, मर्यादा, हितकारिणी, श्रीशारदा आदि पत्रों में आप अपने लेख प्रकाशित कराते रहे, जो लगभग सौ के ऊपर हैं। आपकी रचनाएँ ये हैं :—

१ दो मित्र, २ प्रवासी, ३ नीति-कविता, ४ कविता-कुसुम, ५ रघुवंश-सार, ६ वीर भ्राता लक्ष्मण, ७ कविता-कुसुम-माला, ८ हमारे पूज्यपाद पिता, ९ छत्तीसगढ़-भूषण हीरालाल, १० प्रेम-प्रशंसा, ११ छात्र-दुर्दशा, १२ साहित्य-सेवा, १३ चरितमाला, १४ आनंद की टोकनी, १५ मेवाड़-गाथा, १६ माधव मंजरी, १७ बाल-विनोद, १८ बालिका-विनोद, १९ महानदी, २० नीतिशतक का पद्यानुवाद, २१ कृषकबाल-सखा, २२ कोशल-प्रशस्ति-रत्नावली, २३ कोशल-रत्नमाला, २४ पद्य-पुष्पांजलि, २५ जीवन-ज्योति।

इनमें से महानदी और कविता-कुसुम उड़िया भाषा में हैं जिनकी प्रशंसा उड़िया भाषा के विद्वानों ने की है। इनके अतिरिक्त आपने अँगरेजी में भी कई पुस्तकें लिखी हैं। महानदी खंडकाव्य पर राजकवि श्री सच्चिदानंद त्रिभुवन देव ने आपको काव्य-विनोद की उपाधि प्रदान की थी। आपकी हिंदी पुस्तकों की प्रशंसा हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान् रावराजा डा० श्यामविहारी मिश्र, महामहोपाध्याय बा० जगन्नाथप्रसाद 'भानु', जस्टिस शारदाचरण मित्र तथा डा० सर जार्ज ग्रियर्सन आदि ने की है। कविता-कुसुम-माला मध्य-प्रदेश तथा पंजाब के राष्ट्रीय विद्यालयों में पाठ्य-पुस्तक के रूप में रही। 'रघुवंश-सार' पटना तथा नागपुर विश्वविद्यालयों द्वारा पाठ्य-पुस्तक के रूप में गृहीत हुआ।

हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना में आपने भी योग-दान दिया था और उसकी उपयोगिता के संबंध में अँगरेजी पत्रों में लेख लिखते थे। कई वर्षों तक आप सम्मेलन के स्थायी सदस्य रहे हैं। सन् १९२१ में प्रांतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के चतुर्थ

अधिवेशन के आप सभापति चुने गए थे। आपका भाषण बड़ा प्रभावशाली हुआ था। सन् १९३९ में रायपुर में होनेवाला प्रांतीय इतिहास-परिषद् के भी आप सभापति थे। आप कई श्रेष्ठ संस्थाओं के सदस्य हैं। आप महाकोशल-इतिहास-समिति के जन्मदाता और उसके अवैतनिक संपादक हैं। पुरातत्त्वान्वेषण और ऐतिहासिक खोज के क्षेत्र में आपकी सेवाएँ अमूल्य तथा उच्च कोटि की हैं, जिनकी प्रशंसा पुरातत्त्व विभाग ने मुक्त कंठ से की है।

पांडेय जी की साहित्य-सेवा निःस्वार्थ भाव की है। इस कठिन व्रत को आप अब तक निभाते चले आ रहे हैं। आपका हृदय देशप्रेम से ओतप्रोत है। आपकी दृष्टि धनवानों की अपेक्षा निर्धन और परिश्रमी कृषकों पर अधिक रही है। आप छः भाई हैं तथा प्रायः सभी हिंदी-साहित्य के ज्ञाता और सेवक हैं।

---

(१८) श्री संतराम बी० ए०

आपका जन्म ४ फाल्गुन सं० १९४३ को पंजाब प्रांत के होशियारपुर नगर से लगभग ढाई मील की दूरी पर पुरानी बसी नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री रामदास तथा माता का श्रीमती मालिनी देवी था। आप सात भाई और एक बहन थे। भाइयों में आपका नंबर चौथा है। आपके पिता यारकंद और लद्दाख के व्यापारी थे। पुरानी बसी में कोई स्कूल न होने के कारण आप गाँव से एक मील की दूरी पर बजवाड़ा के स्कूल में पढ़ने जाया करते थे। पंजाब के किसी भी सरकारी स्कूल में हिंदी-शिक्षा का प्रबंध न होने के कारण आपको आरंभ से ही उर्दू पढ़नी पड़ी। पाँचवीं कक्षा में आप सर्वप्रथम आए

और आपको छात्रवृत्ति मिली। जालंधर में आपके बड़े भाई लक्ष्मणदास जी बी० ए० डिस्ट्रिक्ट स्कूलों के इंस्पेक्टर थे, अतः आप जालंधर के म्यूनिसिपल स्कूल में भरती हो गए। वहाँ से मैट्रिक पास करके आप गवर्नमेंट कालेज लाहौर में भरती हुए और वहाँ से सन् १९०९ में बी० ए० पास किया। बी० ए० में आपका एक विषय फारसी भी था, जिसमें आप प्रथम आए और कालेज से पारितोषिक प्राप्त किया।

कालेज के तीसरे वर्ष तक आपको नागरी अक्षरों तक का ज्ञान न था। संस्कृत से एक प्रकार की घृणा तथा फारसी से प्रगाढ़ प्रेम था। आपके विचार से सबसे मधुर भाषा फारसी, सबसे सुंदर देश ईरान तथा सबसे बड़े कवि सादी, उमर खैयाम और फिरदौसी आदि थे। आप स्वप्न देखा करते थे कि कब ईरान जाकर दजला और फरात के तट पर बैठकर खजूर खायँगे और ब्याह करके वहीं बस जायँगे। किंतु संयोगवश रुचि ने ऐसा पल्टा खाया कि संस्कृत भाषा की मधुरता और भारत की सुंदरता के आगे फारसी तथा ईरान हवा हो गए।

उन दिनों आर्य-समाज का प्रमुख पत्र सद्धर्म-प्रचारक उर्दू में निकला करता था। आप उस पत्र को बड़े चाव से पढ़ा करते थे। कुछ दिनों के बाद संपादक ने यह घोषणा कर दी कि अमुक तिथि से पत्र हिंदी में निकलेगा, अत: जो पाठक हिंदी न जानते हों, वे नागरी अक्षर सीख लें। उसी पत्र को पढ़ने के लिये आपने नागरी अक्षर सीखना आरंभ कर दिया। कठिनाई तो पड़ी, किंतु वह कठिनाई अनुराग को दबा न सकी। हिंदी में निकलनेवाले सद्धर्म-प्रचारक को आप धीरे-धीरे पढ़ लेने लगे। आप अँगरेजी से टूटा-फूटा हिंदी में अनुवाद करने लगे। पत्र-व्यवहार भी हिंदी में करने लगे। 'आर्यभाषा हिंदी का सीखना प्रत्येक आर्य हिंदू का परम कर्तव्य है', ऋषि दयानंद के इस उपदेश का

आप पर बहुत प्रभाव पड़ा, और उसी प्रभाव से आपकी रुचि उर्दू से हटकर हिंदी की ओर हुई।

बी० ए० पास करने के बाद आपने अमृतसर जिले के चभाल डी० बी० स्कूल की दो वर्ष तक हेडमास्टरी की। फिर डेढ़ वर्ष तक बजवाड़ा स्कूल में अध्यापकी की। उसके अनंतर सतलज फारेस्ट कम्पनी के गोदाम विभाग में नौकरी करके शिमला के आगे रामपुर बशहर में चले गए। गोदाम का काम करते हुए आपने कोष की सहायता से कई हिंदी ग्रंथों का भली भाँति अध्ययन किया। कठिन शब्दों को कापी पर लिखकर खूब रटते थे। पाँच महीने बाद आपने वह नौकरी भी छोड़ दी।

आपने जालंधर से निकलनेवाली पत्रिका पांचाल-पंडिता और लाहौर से निकलनेवाले चाँद तथा सद्धर्म-प्रचारक में पहले-पहल लेख लिखना आरंभ किया। कुछ दिन पीछे आप द्विवेदी जी के पास सरस्वती में छपने के लिये लेख भेजने लगे। द्विवेदी जी इनके लेखों को काट-छाँटकर तथा सुधार करके छाप दिया करते थे। आपने लिखने की शिक्षा द्विवेदी जी से ही पाई। वे पत्र द्वारा आपको समझाते रहते थे। सन् १९१४ में आपने उषा नाम की एक मासिक पत्रिका निकाली, जो डेढ़ वर्ष चलकर बंद हो गई। इसके अनंतर आपने बहरामपुर के आर्य स्कूल में हेडमास्टरी कर ली। उसे भी छोड़कर आपने एक मित्र के साथ लाहौर जिले के पट्टी नामक स्थान में कृषि-आश्रम खोला। वहाँ पर प्राय: सभी देशों से कृषि-संबंधी ग्रंथ मँगाकर आपने पढ़े। वहाँ दो वर्ष रहने के बाद अपने ग्राम पुरानी बसी में आकर एक कृषक की भाँति वाटिका में परिवार सहित रहने लगे। डेढ़ वर्ष बाद आप कन्या-महाविद्यालय की मुख्य पत्रिका 'भारती' का संपादन करने जालन्धर चले गए। डेढ़ वर्ष तक चलकर 'भारती' बन्द हो गई। उसके बाद आपको भाई परमानन्द जी की कृपा से नेशनल कालेज लाहौर में काम

मिल गया। पहले कुछ समय तक आप राष्ट्रीय शिक्षणालयों के लिये पाठ्य पुस्तकें तैयार करते रहे और फिर अध्यापन-कार्य में लग गए।

सन् १९२४ में कालेज से आपका संबंध टूट गया। इसी वर्ष आपकी धर्मपत्नी श्रीमती गंगादेवी का देहान्त हो गया। तब से आपने किसी की नौकरी न करके स्वतंत्र रूप से कार्य करने का निश्चय कर लिया है। उस समय से पुस्तकों की रायल्टी, लेखों के पुरस्कार तथा पंजाब-विश्वविद्यालय की परीक्षाओं की कापियाँ जाँचने के पारिश्रमिक से आपकी जीविका चल रही है। अब तक आपने छोटी-बड़ी प्राय: ४० पुस्तकें लिखी हैं और सरस्वती, माधुरी, बाल-सखा, सुधा, विश्वमित्र, कर्मयोगी, चाँद आदि पत्रों में विभिन्न विषयों पर लगभग ढाई सौ लेख लिखे हैं। आप समाज-सुधार, विशेषकर जातिगत भेदों को मिटाने के बड़े पक्षपाती हैं। अपने नाम के आगे पहले गोहिल लिखा करते थे, उसे त्याग दिया। जात-पाँत-तोड़क मंडल आपने स्थापित किया। मंडल से 'क्रांति' उर्दू में और 'युगांतर' पत्र हिंदी में, अपने संपादकत्व में, निकाला। 'युगांतर' तो बंद हो गया, किंतु 'क्रांति' निकलता है। मंडल के प्रचार से सैकड़ों जात-पाँत-तोड़क विवाह हुए। भाषण द्वारा भी आप प्रचार करते हैं और आपकी इच्छा है कि शेष जीवन इसी कार्य में बीते।

स्त्री का देहांत हो जाने पर आपने निश्चय किया था कि पुनर्विवाह नहीं करेंगे किंतु सोलह वर्ष के एकमात्र पुत्र वेदव्रत की मृत्यु से आपको महान् कष्ट हुआ और अंत में मित्रों के आग्रह से १४ दिसंबर १९२९ को अहमदाबाद के निकट बरोडा नगर में एक महाराष्ट्र-महिला श्रीमती सुंदरबाई प्रधान से आपने ब्याह कर लिया। उनकी सहायता से आपको मराठी तथा गुजराती का भी थोड़ा-बहुत ज्ञान हो गया है। दोनों भाषाओं की कुछ पुस्तकों

का अनुवाद भी आपने हिंदी में कर लिया है। आजकल आप लाहौर की कृष्णनगर नामक नई बस्ती में मकान बनवाकर रहते हैं। आपकी प्रकाशित पुस्तकें ये हैं :—

१ एकाग्रता और दिव्यशक्ति, २ गुरुदत्त-लेखावली, ३ दंपति-मित्र, ४ विवाहित प्रेम, ५ शिशु-पालन, ६ पंजाबी गीत, ७ कर्म-योग, ८ दयालु माता, ९ सद्गुणी पुत्री, १० बालक, ११ अतीत-कथा, १२ वीर-गाथा, १३ काम-कुंज, १४ वीर पेशवा, १५ रणजीत-चरित, १६ रति-विज्ञान, १७ रति-विलास, १८ भारत में बाइबिल दो भाग, १९ आदर्श पति, २० आदर्श पत्नी, २१ महिला-मणि-माला, २२ अलबरूनी का भारत ३ भाग, २३ इत्सिंग की भारत-यात्रा, २४ लोक-व्यवहार, २५ रसीली कहानियाँ, २६ दयानंद, २७ नीरोग कन्या, २८ सुशील कन्या, २९ सुंदरी-सुबोध, ३० मानसिक आकर्षण द्वारा व्यापारिक सफलता, ३१ मानव-जीवन का विधान, ३२ सद्गुणी बालक, ३३ बाल-सद्बोध, ३४ बच्चों की बातें, ३५ विश्व की विभूतियाँ, ३६ जान जोखिम की कहानियाँ, ३७ स्वदेश-विदेश-यात्रा, ३८ जातिभेद का उच्छेद, ३९ स्वर्गीय संदेश, ४० कौतूहल-भांडार।

'अलबरूनी का भारत' के लिये १२०० रु० और 'इत्सिंग की भारत-यात्रा' के लिये ६०० रु० पंजाब सरकार की ओर से आपको पारितोषिक के रूप में मिला था। मेरठ के एक ट्रस्ट ने 'बालक' को उस वर्ष की सर्वश्रेष्ठ शिक्षा-संबंधी पुस्तक समझकर एक स्वर्ण-पदक प्रदान किया था।

उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त आपने लड़के-लड़कियों के लिये बहुत सी पाठ्य पुस्तकें लिखी हैं।

---

(१९) पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी

आपका जन्म चैत्र शुक्ल १० सं० १९४४ को कानपुर जिले के मैथा नामक ग्राम में हुआ था। चार ही पाँच वर्ष की अवस्था में आपके पिता और पितामह ने आपको धर्म और नीति के श्लोक कंठाग्र कराने आरंभ कर दिए। इससे बचपन से ही आपका प्रेम कविता की ओर बढ़ा। प्राचीन प्रथा के अनुसार केवल अपने नेत्रसुख के लिये आपके दादा-बाबा, पिता-माता ने बारह वर्ष की अवस्था में ही आपका विवाह कर दिया। फलत: चौदह वर्ष की अवस्था के पीछे फिर आप शिक्षा ग्रहण न सके। कुछ समय के अनंतर आपके माता-पिता तथा दादा का देहांत हो गया। अचानक सभी बड़ों के चले जाने से आपकी गार्हस्थ्य दशा खराब हो गई! उस खाने, खेलने और पढ़ने की अवस्था में ही अपने छोटे भाई-बहिनों का तथा अपना भी निर्वाह करने के लिये नौकरी की खोज करनी पड़ी। भाग्य से शीघ्र ही अध्यापकी का कार्य मिल गया।

साहित्य और कविता के प्रति प्रेम, जो बचपन ही में उत्पन्न हो गया था, दिनों-दिन बढ़ता गया। अनेक कविताएँ, पुस्तकें तथा समाचारपत्र पढ़ते-पढ़ते आपकी भी इच्छा कुछ कविता करने की हुई। सन् १९०५ में आपका परिचय, पत्र-व्यवहार द्वारा, प्रसिद्ध लेखक और देशभक्त पंडित माधवराव सप्रे से हो गया। सप्रे जी उस समय नागपुर से हिंदी-ग्रंथमाला नामक मासिक पत्रिका निकाल रहे थे। उसकी सहायता के लिये उन्होंने आपको बुला लिया। सप्रे जी ऐसे विद्वान् और अनुभवी साहित्यिक के संसर्ग से वाजपेयी जी को साहित्य के अध्ययन तथा सेवा का अच्छा अवसर मिला। उसी समय से आपकी कविताएँ और लेख भारतमित्र, श्री वेंकटेश्वर-समाचार, कान्यकुब्ज, सरस्वती और

कमला इत्यादि पत्र-पत्रिकाओं में निकलने लगे। पंडित महावीर-प्रसाद द्विवेदी से भी आप को अच्छा प्रोत्साहन मिला।

सन् १९०७ में सप्रे जी ने 'हिंदी-केसरी' पत्र निकाला। उसके आप सहकारी संपादक थे। सप्रे जी की गिरफ़ारी और तदनंतर पत्र से उनका संबंध छूटने पर आप ही पर हिंदी-केसरी के संपादन का भार पड़ा। उक्त पत्र में समय-समय पर आपकी राष्ट्रीय कविताएँ निकलती रहीं। लगभग दो वर्ष के बाद अन्य कई पत्रों की भाँति हिंदी-केसरी भी सरकार का कोपभाजन बना और बंद हो गया। उसके अनंतर आप सप्रे जी के साथ मध्यप्रदेश के रायपुर नगर में रहने लगे। उनके साथ में कुछ ग्रंथ भी लिखे। अब धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों से कुछ विशेष रुचि हो गई।

सन् १९११ में सप्रे जी तथा आपके प्रोत्साहन से चित्रशाला प्रेस के मालिकों ने हिंदी में 'चित्रमय जगत्' नामक मासिक पत्र निकाला। आप उसके संपादक होकर पूना गए और बड़ी योग्यता से तीन वर्ष तक आपने उस पत्र का संपादन किया। इसके अनंतर आर्य-प्रतिनिधि सभा द्वारा आगरा से निकलनेवाले 'आर्यमित्र' का संपादन करने के लिये आगरा गए। वहाँ भी तीन वर्ष तक रहे। उसी समय आपने अपनी तरुण-भारत-ग्रंथावली नामक सीरीज निकाली। तीन वर्ष के अनंतर सभा के अधिकारियों से मेल न खाने के कारण आप पूना लौट गए और फिर दो वर्ष तक चित्रमय जगत् का संपादन करते रहे। सन् १९१८ में आप पूना छोड़कर प्रयाग आ गए और यहीं से अपने निर्वाह के लिये तरुण-भारत-ग्रंथावली का प्रकाशन करते हुए साहित्य-सेवा, देश-सेवा और समाज-सुधार का काम करने लगे। सन् १९३७ में लक्ष्मी आर्ट प्रेस नाम से अपना एक छोटा सा प्रेस भी खोल लिया और अपने ही संपादकत्व में राष्ट्रमत नामक पत्र

निकालने लगे। अब आप अपने प्रेस सहित गांधीनगर कानपुर में चले गए हैं। आपकी रचनाएँ ये हैं :—

मौलिक :—१. धर्मशिक्षा, २ गार्हस्थ्यशास्त्र, ३ सदाचार और नीति, ४ काव्य और संगीत।

मराठी उपन्यासों के अनुवाद—५ वज्राघात, ६ उषःकाल, ७ चंद्रगुप्त, ८ मेघदूत, संस्कृत-मेघदूत का समश्लोकी और समवृत्त अनुवाद।

सप्रे जी के साथ में लिखित—९ दासबोध, १० रामदास-चरित्र, ११ शालोपयोगी भारतवर्ष।

---

(२०) बाबू गुलाबराय, एम० ए०, एल्-एल० बी०

आपका जन्म माघ शुक्ला ४ सं० १९४४ को इटावा में हुआ था। मूल निवासस्थान जलेसर, जिला एटा था। आपके पितामह लाला कन्हैयालाल परचून की दूकान करते थे। अपने बाल्यकाल में आप भी कुछ दिनों तक उस दूकान में बैठे हैं। उसी दूकान पर अपने ताऊ जी के मुख से कबीर का 'चंदन की चुटकी भली, भली न गाड़ी भरो कबीर' वाला दोहा सुना था और परिमाण की अपेक्षा गुण का आदर करना सीखा था। आपके पिता बाबू भवानी-प्रसाद कलक्टरी में २० रु० मासिक पर क्लर्क थे। वे अत्यंत धार्मिक और अद्वैत वेदांत के परम अनुयायी थे। उन्होंने प्रण किया था कि जब वेतन १० से २० रुपये मासिक हो जायगा तब हक-हकूक लेना बन्द कर देंगे और २० रु० हो जाने पर इस प्रण का आजन्म निबाहा। आपकी माता को सूरदास जी के पदों से विशेष प्रेम था। इस प्रकार आपके दार्शनिक और साहित्यिक

संस्कार बन गए। अपने पिता की ईमानदारी का भी आप पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

आपकी प्रारंभिक शिक्षा क्रम से तहसीली स्कूल, गवर्नमेंट स्कूल, मिशन स्कूल मैनपुरी में हुई। आठवें दर्जे तक फ़ारसी पढ़कर नवें से संस्कृत पढ़ना आरंभ किया। समयानुसार सन् १९०५ में एंट्रेंस, १९११ में आगरा कालेज से बी० ए०, फिर १९१३ में सेंट जान्स कालेज से एम० ए० और १९१७ में एल्-एल० बी० पास किया।

सन् १९१२ से १९१३ तक आप सेंट जान्स कालेज में तर्कशास्त्र के अध्यापक रहे। सन् १९१३ से १९३२ तक छतरपुर राज्य में नौकरी की। बीच में २ वर्ष के लिये एल्-एल० बी० परीक्षा पास करने आगरा आए थे। आप महाराजा साहब के दार्शनिक एवं साहित्यिक सहायक थे, फिर प्राइवेट सेक्रेटरी हुए। उसके पश्चात् कुछ दिनों तक दीवान और चीफ़ जज भी रहे। महाराजा साहब के देहावसान पर सन् १९३२ में आपको पेंशन मिली।

विद्यार्थी-जीवन में आप कोर्स की पुस्तकों के अतिरिक्त ज्ञानोपार्जन के निमित्त अन्य पुस्तकें अधिक पढ़ते थे। कदाचित् इसी कारण आप दो-एक वर्ष फेल हुए और अच्छी श्रेणी में पास न हो सके। एम० ए० में पढ़ते हुए आपने अँगरेजी में दो-एक लेख लिखे थे। छतरपुर पहुँचने पर आपने लेखन-कार्य आरंभ किया। कुमार देवेंद्रप्रसाद जी जैन की गुणग्राहकता से आपको लिखते रहने का उत्साह प्राप्त हुआ। मिश्र-बंधुओं के संपर्क में आने के कारण आपकी रुचि और अधिक बढ़ी। आपकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं :—

१ शांति धर्म, २ धर्म और नवरस, ३ कर्तव्य-शास्त्र और तर्कशास्त्र, ४ पाश्चात्य दर्शनों का इतिहास, ५ ठलुआ क्लब, ६ प्रबंध-प्रभाकर, ७ हिंदी-साहित्य का सुबोध इतिहास, ८ विज्ञान-

वार्ता, ९ हिंदी-नाट्य-विमर्श, १० बौद्ध धर्म, ११ मेरी असफलताएँ।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने और भी कई छोटे-मोटे ग्रंथ लिखे हैं तथा पत्र-पत्रिकाओं में अनेक लेख प्रकाशित किए हैं।

आप आजकल 'साहित्य-संदेश' का संपादन करते और सेंट जान्स कालेज में उच्च कक्षाओं को हिंदी पढ़ाते हैं। आगरा नागरीप्रचारिणी सभा की सेवा भी आप निरंतर करते रहते हैं। गुलाबराय जी दर्शनशास्त्र-संबंधी पुस्तकों तथा निबंधों के लिये सम्मानित हैं और सीधी-सादी भाषा में हिंदी-साहित्य के भांडार को भरते हैं।

---

(२१) पंडित माखनलाल चतुर्वेदी

आपका जन्म चैत्र शुक्ल ११ सं० १९४५ को बाबई जिला होशंगाबाद में हुआ था। आप गौड़ ब्राह्मण हैं। आपके पिता का नाम पंडित नंदलाल चतुर्वेदी था। आपके पूर्वज रानोली (जयपुर) के रहनेवाले थे और वहाँ से आकर बाबई में बस गए थे। आपकी आरंभिक शिक्षा गाँव के मदरसे में हुई। मिडिल पास करने के अनंतर आपने सन् १९०३ में नार्मल परीक्षा पास की और सन् १९०४ में खंडवा मिडिल स्कूल के अध्यापक नियुक्त हुए। अध्यापन-कार्य के साथ साथ आपने अँगरेजी का भी अभ्यास आरंभ कर दिया और धीरे-धीरे अँगरेजी में भी अच्छा व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर लिया। सर्वप्रथम आपकी कविताएँ खंडवा से निकलनेवाली 'प्रभा' नाम की मासिक पत्रिका में निकलीं।

आपकी रुचि साहित्य-सेवा की ओर अधिक थी, अतः आपसे नौकरी न हो सकी। आपने पंडित माधवराव सप्रे के सहयोग में

'कर्मवीर' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला। कुछ दिनों तक आप योग्यतापूर्वक उसका संपादन करते रहे। फिर कुछ दिनों तक 'प्रताप' तथा 'प्रभा' का भी संपादन किया। आपके हृदय में देश के प्रति प्रेम पहले से ही था। सन् १९२१ के आन्दोलन का प्रभाव आप पर पड़ा और आपको उसमें भाग लेने के कारण ८ महीने के लिये जेल जाना पड़ा। जेल से निकलने पर फिर राष्ट्रीय आंदोलन में लग गए। आप बड़े निर्भीक और स्पष्टवादी वक्ता हैं। मध्यप्रदेश की जनता में एक नेता के नाते आप सम्मानित हैं। बीच में कुछ दिनों के लिये कर्मवीर बंद हो गया था, उसे फिर आपने खंडवा से निकाला और उसमें कविता की आड़ में अपने देश-प्रेम-पूर्ण भावों को व्यक्त करने लगे। अब तक आप उसी पत्र का संपादन कर रहे हैं।

चतुर्वेदी जी बचपन से ही कविता करने लगे थे। आपकी कविताएँ 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से प्रकाशित होती हैं। आप हिंदी के सच्चे राष्ट्रीय कवि हैं। आपकी रचना में शुद्ध देशभक्ति और आत्मत्याग का बड़ा प्रभावशाली वर्णन रहता है।

आपने ग्रंथ-निर्माण की ओर उतना ध्यान नहीं दिया, प्रत्युत सामयिक कविता लिखने में ही अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। आप एक कुशल संपादक हैं। आप मितभाषी, सरस-हृदय, सच्चे देशभक्त, प्रेम के मर्मज्ञ तथा त्यागी व्यक्ति हैं। सं० १९७१ में पत्नी का देहांत हो जाने से आपके मन पर बहुत मार्मिक प्रभाव पड़ा।

आपकी दो-तीन पुस्तकें ये हैं :—१ कृष्ण-अर्जुन-युद्ध नाटक, २ साहित्य-देवता (गद्य काव्य) अप्रकाशित, ३ वनवासी (कहानी-संग्रह)

———

(२२) बाबू रामचंद्र वर्म्मा

पंजाब के गुजराँवाला जिले में अकालगढ़ नाम का एक कस्बा है जो बहुत दिनों से चोपड़े खत्रियों का एक बड़ा केंद्र है। इसी चोपड़ा-परिवार में पंजाब के सुप्रसिद्ध दीवान सावनमल हुए थे जो बहुत दिनों तक महाराज रणजीतसिंह की तरफ से मुलतान और काश्मीर के सूबेदार और दीवान थे। उन्हीं के कारण अकालगढ़ के सब चोपड़े आज तक दीवान कहे जाते हैं। बाबू रामचंद्र वर्म्मा का जन्म काशी में इसी चोपड़ा-परिवार में दीवान परमेश्वरी-दास के घर बुधवार माघ बदी २ संवत् १९४६ को हुआ था।

वर्म्मा जी जब आठ-नौ बरस के थे, तभी उन पर से उनके पिता की छत्र-छाया उठ गई थी। तभी से वे काशी के भारत-जीवन प्रेस में आने-जाने लगे थे। वहीं स्वर्गीय बाबू रामकृष्ण वर्म्मा की कृपा से उन्हें लिखने पढ़ने का शौक हुआ था। उन दिनों 'भारत-जीवन' में बड़े बड़े हिंदी-सेवियों का प्रायः आना-जाना होता था। इससे बाबू रामचंद्र को भी उन लोगों के दर्शनों से हिंदी-सेवा के लिये बहुत कुछ प्रोत्साहन मिलता था।

चौदह-पंद्रह वर्ष की अवस्था से बाबू रामचंद्र 'भारत-जीवन' पत्र में कुछ न कुछ लिखने लगे थे। फिर जब सन् १९०७ में नागपुर से 'हिंदी-केसरी' निकलने लगा, तब ये पहले कुछ दिनों तक उसके सहायक सम्पादक और फिर सम्पादक का काम करते थे। मराठी इन्होंने वहीं सीखी थी।

सन् १९०८ में काशी में जब नागरी-प्रचारिणी सभा में हिंदी-शब्दसागर का कार्य आरम्भ हुआ, तब ये भी शब्द-संग्रह के काम के लिये नियुक्त किए गए। पर जब कोश विभाग जम्मू चला गया, तब ये बाँकीपुर में जाकर 'बिहार-बंधु' का सम्पादन करने लगे। कोश विभाग के काशी आ जाने पर थोड़े ही दिन के

अनंतर ये फिर उसमें सम्मिलित हो गए और कुछ दिनों में अपनी योग्यता तथा तीव्र बुद्धि के कारण सहायक सम्पादक के पद पर नियुक्त हो गए। तब से सन् १९२८ तक अर्थात् कोश की समाप्ति तक ये बराबर उसी पद पर रहे। शब्दसागर प्रस्तुत करने में इनका सहयोग और कार्य प्रशंसनीय रहा।

वर्म्मा जी बहुत अधिक परिश्रमी हैं और सदा कुछ न कुछ काम करते रहते हैं। इनमें एक और बड़ा गुण यह है कि ये काम बहुत जल्दी करते हैं। यही कारण था कि हिंदी शब्दसागर का सम्पादन करते रहने पर भी ये अनेक प्रकार से हिंदी की सेवा करते रहे और अनुवादों, संकलनों तथा स्वतंत्र रचनाओं से हिंदी साहित्य के भांडार की श्री-वृद्धि करते रहे। इनकी रचनाओं की संख्या सब मिलाकर एक सौ से ऊपर पहुँच चुकी है।

सन् १९१३ और १४ में वर्म्मा जी नागरी-प्रचारिणी पत्रिका के सहायक संपादक और १९१५ तथा १६ में उसके संपादक थे। सन् १९१४ में जब युरोप का महायुद्ध छिड़ा था, तब भारत-जीवन पत्र के अध्यक्ष और इनके परम मित्र तथा बालसखा बा० श्रीकृष्ण वर्म्मा ने भारत-जीवन दैनिक कर दिया था। उस दैनिक पत्र का संपादन भी वर्म्मा जी ही करते थे। पर दुर्भाग्यवश थोड़े ही दिनों बाद बा० श्रीकृष्ण वर्म्मा की मृत्यु हो जाने के कारण वह दैनिक पत्र बन्द हो गया और कुछ दिनों तक ये साप्ताहिक 'भारत जीवन' का संपादन करते रहे।

वर्म्मा जी हिंदी और अगरेजी के सिवा बँगला, मराठी, गुजराती और उर्दू-फारसी का भी अच्छा ज्ञान रखते हैं। इन सभी भाषाओं से इन्होंने बहुत से अच्छे अच्छे और कई बड़े बड़े ग्रंथों का भी सुंदर अनुवाद किया है। वर्म्मा जी की भाषा बहुत ही सुंदर, शुद्ध तथा निर्दोष होती है और उसमें ओज तथा प्रसाद

आदि गुणों की यथेष्ट मात्रा रहती है। भाषा की शुद्धता और सुंदरता पर ये सदा ध्यान रखते हैं।

जब सभा ने शब्दसागर का एक संक्षिप्त संस्करण तैयार कराना निश्चित किया, तब पहले उसका संपादन स्वर्गीय पं० रामचंद्र शुक्ल को सौंपा गया था, पर शुक्ल जी अनेक कारणों से उसके लिये समय न निकाल सके। तब वह काम वर्म्मा जी को दे दिया गया था। यह काम उन्होंने जिस योग्यता और निपुणता से किया, उसका साक्षी संक्षिप्त हिंदी-शब्दसागर है जिसके अब तक चार संस्करण हो चुके हैं। अब सभा ने उसे दोहराकर ठीक करने और इधर हाल के प्रचलित नए हजारों शब्द उसमें सम्मिलित करने का भार भी इन्हीं को दिया है।

वर्म्मा जी ने कुछ दिन पहले एक अच्छा उर्दू-हिंदी कोश भी तैयार किया था, जिसका हिंदी-जगत् में अच्छा आदर हुआ था। अभी हाल में आपने उसमें बहुत कुछ संशोधन और परिवर्तन भी किया है। वह संस्करण भी प्रकाशित होकर अच्छा आदर पा रहा है।

वर्म्मा जी के अनुवादित, संकलित तथा रचित ग्रंथों में से मुख्य ग्रंथ प्राय: कालक्रम के विचार से इस प्रकार हैं :—

१. काली नागिन, २ बर्नियर की भारत-यात्रा, ३ झाँसी की रानी, ४ महादेव गोविंद रानडे, ५ आत्मोद्धार, ६ सफलता और उसकी साधना के उपाय, ७ बालशिक्षा, ८ उपवास-चिकित्सा, ९ वैधव्य कठोर दंड है या शांति, १० भारत की देवियाँ, ११ महात्मा गांधी, १२ गोपाल कृष्ण गोखले, १३ हम स्वराज्य क्यों चाहते हैं, १४ आयरलैंड का इतिहास, १५ सुभाषित और विनोद, १६ साम्यवाद, १७ भूकम्प, १८ राजा और प्रजा, १९ मेवाड़ पतन, २० सिंहल-विजय, २१ सूर्यग्रहण, २२ करुणा, २३ वर्तमान एशिया, २४ जातक कथा माला, २५ वैज्ञानिक साम्यवाद, २६

कर्तव्य, २७ हिंदू-राज्यतंत्र दो भाग, २८ प्राचीन मुद्रा, २९ रवींद्र कथा-कुंज, ३० भारत के स्त्रीरत्न, ३१ छत्रसाल, ३२ अकबरी दरबार चार भाग, ३३ भारतीय स्त्रियाँ, ३४ सामर्थ्य, ३५ समृद्धि और शांति, ३६ मधु-चिकित्सा, ३७ विधाता का विधान, ३८ मानव जीवन, ३९ गोरों का प्रभुत्व, ४० अमृत पान, ४१ अरब और भारत के संबंध, ४२ निबंध-रत्नावली, ४३ असहयोग का इतिहास, ४४ संजीवनी विद्या, ४५ रूपक रत्नावली दो भाग, ४६ शिक्षा और देशी भाषाएँ, ४७ हिंदी दासबोध, ४८ पुरानी दुनियाँ, ४९ मितव्यय, ५० काश्मीर-दर्शन, ५१ लंका के मोती, ५२ आँखों-देखा महायुद्ध, ५३ कविता कुंज, ५४ मँगनी के मियाँ, ५५ मानस सरोवर और कैलास, ५६ उर्दू-हिंदी कोश, ५७ हिंदी ज्ञानेश्वरी, ५८ अंधकारयुगीन भारत, ५९ धर्म की उत्पत्ति और विकास, ६० धर्मों का इतिहास, ६१ रमा नाटिका, ६२ दुनिया की शासन-प्रणालियाँ दो भाग, ६३ ग्रामीण समाज आदि आदि।

पंजाब में शिमले के पास बिलासपुर नाम का एक राज्य है। वहाँ के महाराज साहब शिक्षा के बहुत प्रेमी हैं और वे हिंदी की कुछ प्रारम्भिक पाठ्य पुस्तकें तैयार करा रहे हैं। उन पुस्तकों के लिये पहले तो वर्मा जी ने आनंद शब्दावली नाम की एक शब्दसूची छः भागों में प्रस्तुत की थी। इस शब्दावली की इस दृष्टि से बहुत कुछ प्रशंसा और आदर हुआ है कि यदि इसके अनुसार पाठ्य पुस्तकें तैयार की जायँ तो उनकी भाषा क्रमशः आरम्भ से चलकर उत्तरोत्तर कठिन होती जाती है। अब दो वर्षों से वर्म्मा जी उक्त राज्य के लिये वही पाठ्य पुस्तकें प्रस्तुत करने के काम में लगे हुए हैं।

वर्म्मा जी का स्वभाव बहुत ही मिलनसार है। ये व्यवहार के सीधे और सच्चे हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि

ये जबरदस्ती आगे बढ़कर अपने आप को प्रकट नहीं करते, बल्कि बहुत ही शांतिपूर्वक और चुपचाप यथाशक्ति काम करते रहते हैं।

---

(२३) पंडित लक्ष्मण नारायण गर्दे

आपका जन्म फाल्गुन सं० १९४६ में, काशी में, हुआ था। आप करहाड़ शाखा के महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं। आपके पूर्वज रत्नागिरी जिले में तेरे नामक ग्राम के निवासी थे। आपके पितामह सागर (सी० पी०) में आए, और वहाँ से धनोपार्जन करके काशी में आकर बस गए। यहाँ पर उन्होंने कुछ जमींदारी खरीदी तथा मकान बनवाया और मकान के साथ ही सागरवाले अपने स्वामी के नाम पर एक शिव जी का मंदिर बनवाया। आपके पिता पं० नारायणराव गर्दे ने काशी में वेदाध्ययन किया। वे गीता के बड़े भक्त, धीर, साहसी तथा विनोदप्रिय थे। अपने पिता के प्रायः सभी गुणों को आपने पैतृक संपत्ति के रूप में पाया। गीता के प्रति श्रद्धा का बीज उन्हीं के द्वारा बोया गया था।

आपकी आरंभिक शिक्षा यहीं के एक महाराष्ट्रीय स्कूल में मराठी भाषा से आरंभ हुई और वहीं पर पाँचवीं कक्षा तक आपने अँगरेजी भी पढ़ी। उसके अनंतर आप क्वींस कालेजिएट स्कूल बनारस में छठी कक्षा में भर्ती हुए और ८वीं वहीं से पास की। ९वीं कक्षा आपने मैकडानल हाई स्कूल झाँसी से पास की और फिर हिंदू कालेज काशी में आकर १०वीं कक्षा में भर्ती हुए। वहाँ से सन् १९०७ में साइंस के साथ स्कूल फ़ाइनल परीक्षा पास की। एफ० ए० में केवल ६ मास तक पढ़ते रहे, फिर कुछ आर्थिक

पंडित लक्ष्मण नारायण गर्दे

पंडित विश्वेश्वरनाथ रेउ

पंडित कृष्णबिहारी मिश्र

श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक

बाबू ब्रजरत्नदास

ठाकुर गोपालशरण सिंह

श्री राय कृष्णदास

बाबू कृष्णदेवप्रसाद गौड़

कठिनाई और कुछ समाचार-पत्रों की ओर चित्त लगा रहने के कारण आपने पढ़ाई छोड़ दी।

इसी बीच में बँगला भाषा के साइन-बोर्डों को देखकर आपने बँगला वर्णमाला सीखी और धीरे धीरे आप बँगला के लेख तथा पुस्तकें पढ़ने लगे। आपको देश की राजनीतिक बातों से बड़ी रुचि थी। आप तिलक जी के केसरी पत्र को बड़े चाव से पढ़ते थे। पढ़ाई छोड़कर आप वेंकटेश्वर समाचार में काम करने के लिये बंबई चले गए। वहाँ कुछ दिनों तक काम किया, किंतु अपने अनुकूल वातावरण न पाकर लौट आए और कलकत्ते जाकर बंगवासी के सहकारी संपादक नियुक्त हो गए। उसके प्रधान संपादक बाबू हरिकृष्ण जौहर थे, जिनसे आपने संपादन-कला सीखी। लगभग १ वर्ष उस पत्र में काम करने के अनंतर आप 'भारतमित्र' में चले गए। कुछ कारण-वश 'भारतमित्र' से भी आप अलग हो गए। कलकत्ते में ही एक विद्वान् कनफटे बाबा से आपकी भेंट हो गई, जिनको अब भी आप ब्रह्मचारी जी के नाम से स्मरण करते हैं। उन्हीं से आपने १८ दिनों में गीता के १८ अध्याय पढ़े। इसके पश्चात् आप काशी लौट आए और पहला कार्य आपने जो किया वह गीता की टीका लिखना था। वह टीका किसी भाष्य के आधार पर न होकर सर्वथा मौलिक थी।

काशी आकर आपने हरिश्चंद्र हाईस्कूल में अध्यापकी कर ली। साथ ही साथ कुछ मित्रों के सहयोग से आप नवनीत नाम का पत्र भी निकालने लगे। आगे चलकर उसी पत्र में फँसे रहने के कारण आपने अध्यापकी छोड़ दी। आपने नैपाल की भी यात्रा की और डेढ़ वर्ष तक वहाँ के राजगुरु पं० हेमराज के तत्त्वावधान में उनके 'सरस्वती-भवन' का कार्य करते रहे। कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित होने की इच्छा आपको बहुत रहती थी। सन् १९१७ में कलकत्ते की कांग्रेस में उपस्थित होने के लिये

ही आप नैपाल से आए थे। सन् १९१९ में 'भारतमित्र' के डाइरेक्टरों ने फिर आपको बुला लिया। कुछ दिनों के बाद पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी के छोड़ देने से संपादन का भार आप पर ही पड़ा, जिसे आप ६ वर्ष तक करते रहे। पहले ६ महीनों में तो आपको २-२ बजे रात तक अध्ययन करना पड़ता था। परिणाम-स्वरूप आपका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया।

सन् १९२० की स्पेशल कांग्रेस के बाद कलकत्ते में एक कांग्रेस कमेटी बनी, जिसमें लोक-निर्वाचित प्रथम प्रेसीडेंट आप ही थे। भारतमित्र के संपादन के साथ साथ कांग्रेस का भी कार्य आप करते थे। अहिंसात्मक अवज्ञा का प्रस्ताव सर्वप्रथम आप ही के सभापतित्व में कलकत्ते की मीटिंग में पास हुआ। कोई भी ऐसी सभा-सोसाइटी न होती थी जिसमें आदर के साथ आप न बुलाए जाते रहे हों। उन दो कार्यों के साथ पुस्तक-लेखन का कार्य भी चल रहा था। 'कृष्णचरित्र' आपने उसी समय लिखा। भारत-मित्र में आपके लेख बड़े विद्वत्तापूर्ण होते थे। उनका अनुवाद लाहौर के उर्दू प्रताप में, मद्रास के अँगरेजी 'स्वराज्य' में तथा कलकत्ते के 'सरवेंट' में प्रकाशित होता था। सन् १९२५ में भारतमित्र सनातनधर्म की महामंडल संस्था के हाथ में चला गया। उसके अधिकारियों से आपका मतभेद होने के कारण आपने 'भारतमित्र' को छोड़ दिया और बाबू चुन्नीलाल वर्मन के सहयोग से 'श्रीकृष्ण-संदेश' नाम का एक पत्र निकाला। कुछ दिनों में वह पत्र पूर्णत: आपके हाथ में हो गया। काशी आकर भी कुछ दिनों तक आप उसे चलाते रहे किंतु घाटा न सह सकने के कारण अंत में उसे बंद कर देना पड़ा। उसके बाद से आप काशी में ही रहकर साहित्य-सेवा कर रहे हैं। भारतमित्र के संवाददाता का काम करते थे और समय समय पर 'कल्याण' का विशेषांक निकलने के अवसर पर, गीता प्रेस गोरखपुर के संपादन विभाग में

चले जाते थे। योगांक, संतांक, वेदांतांक और साधनांक के समय में आप संपादन विभाग में थे।

कलकत्ते में रहकर आपने और एक महत् कार्य किया था। श्री जगन्नाथ जी बढ़े के सहयोग में राष्ट्रीय गोरक्षा-मंडल स्थापित किया था और हरिहर क्षेत्र में आंदोलन करके गोवध बंद कराया था। गोवध के स्थान पर वहाँ राधाकृष्ण का एक मंदिर है।

आपके ग्रंथ ये हैं :—

मौलिक—१ नकली प्रोफेसर उपन्यास, २ मियाँ की करतूत उपन्यास, ३ महाराष्ट्र रहस्य, ४ सरल गीता, ५ श्रीकृष्ण-चरित्र, ६ एशिया का जागरण।

अनुवादित—७ एकनाथ चरित्र, ८ ज्ञानेश्वर चरित्र, ९ तुकाराम चरित्र, १० श्री अरविंद योग, ११ योग-प्रदीप, १२ हिंदुत्व, १३ गांधी सिद्धांत, १४ आरोग्य और उसके साधन, १५ जापान की राजनीतिक प्रगति, १६ माँ।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अनेक साहित्यिक लेख श्रेष्ठ पत्र-पत्रिकाओं में लिखे हैं, विशेष कर 'कल्याण' में। साहित्यिक सेवा के अतिरिक्त आप गीता प्रवचन भी बड़ा सुंदर करते हैं। गीता प्रेस गोरखपुर में आपका गीता प्रवचन १ वर्ष तक हुआ जिसे सुनने के लिये विद्वान् और भक्त दोनों आते थे।

---

(२४) पंडित रामनरेश त्रिपाठी

आपका जन्म सं० १९४३ में कोइरीपुर, जिला जौनपुर में हुआ था। आपके पिता का नाम पं० रामदत्त त्रिपाठी था, जो बड़े भगवद्भक्त तथा गीता, रामायण के अनन्य प्रेमी थे। अपने पिता से ही आपको रामायण का प्रेम प्राप्त हुआ। आप सरयूपारी ब्राह्मण

हैं। अपने गाँव कोइरीपुर में अपर-प्राइमरी की परीक्षा पास कर आप जौनपुर चले गए। वहाँ हाईस्कूल में नाम लिखाया औ बोर्डिंग हाउस में रहकर पढ़ने लगे। आपके पिता जी को अँगरेज पढ़ना जरा भी अच्छा न लगा किंतु नौकरी करके धनोपार्जन व आशा से आप अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध भी पढ़ते रहे किंतु ऐसी अवस्था में पढ़ाई कहाँ तक चल सकती थी; क्योंि छुट्टियों में जब घर जाते तो पिता जी बहुत बुरा भला कहते थे अतः ९ वें क्लास से आपने पढ़ना छोड़ दिया और घरवालों वे बिना जताए कलकत्ता भाग गए। वहाँ अपने ही गाँव के ए सज्जन के यहाँ ठहरकर कुछ पढ़ने लगे।

कलकत्ते में आपको संग्रहणी का रोग हो गया। धीरे धी रोग असाध्य हो गया। डाक्टर ने कह दिया कि अब १५ दि से अधिक नहीं जी सकते। आप बड़े निराश हुए किन्तु ए मारवाड़ी सज्जन के यह कहने पर कि मारवाड़ चले जाइए तो अच्छे हो सकते हैं, मारवाड़ चले गए। शेखावाटी के फतहपुर नाम शहर में ठहरे और बाजरे की रोटी तथा मट्ठे के सेवन से आप ए वर्ष में बिल्कुल नीरोग हो गए और घर लौट आए, किंतु रोग कुछ शेष दिखाई पड़ा, अतः फिर वहीं चले गए और ५ वर्ष तक रहे वहाँ मारवाड़ी मित्रों की सहायता से आपने एक अच्छा सा पुस्त कालय खोला, जिसमें हिंदी, संस्कृत तथा अँगरेजी की पुस्तकें थीं वहीं पर आपकी अध्ययन-पिपासा तृप्त हुई। बंगला भाषा आप कलकत्ते में सीख चुके थे। मारवाड़ में आपने गुजराती सीखी जिसका आपको विशेष ज्ञान है।

यों तो आप अपने गुरु की प्रेरणा से चौथे दरजे से ही सवैया घनाक्षरी रचने लगे थे तथा उसी समय आपका पहला लेख, जो विद्या संबंधी था, अलीगढ़ से निकलनेवाले 'शिक्षा प्रभाकर' में निकला था, किंतु आपकी साहित्य-सेवा मारवाड़ से प्रारंभ होती है

वहाँ आपने अनेक कविताएँ तथा पुस्तकें लिखीं। 'हे प्रभो आनंददाता' वाली प्रसिद्ध प्रार्थना आपने वहीं लिखी और हिंदी महाभारत भी वहीं लिखा।

सन् १९१५ में आपके पिता का देहांत हो गया। तब आप मारवाड़ से घर आए और दो वर्ष बाद १९१७ में प्रयाग पहुँचे। तब से आप वहीं रहे, यद्यपि घर सुलतानपुर में बनवा लिया है और परिवार वहीं रहता है। प्रयाग में आपने कविताकौमुदी का पहला भाग प्रकाशित कराया। उस समय आप नवयुवक थे, हृदय में देश-प्रेम की तरंगें लहरें मार रही थीं, अतः असहयोग आंदोलन में प्रवृत्त हुए। देश के सभी प्रमुख नेताओं से परिचय हुआ। तिलक स्वराज्य फंड के लिये जौनपुर में दौरा करके लगभग ३००० रु० इकट्ठे किए। १९२१ में १८ महीने की सख्त कैद और १०० रु० जुरमाने का दंड मिला। सजा काट कर १ वर्ष तक इधर-उधर भटकते रहे। १९२४ में हिंदी-मंदिर प्रयाग की स्थापना की और १९३१ में हिंदीमंदिर प्रेस खोला। तब से दोनों संस्थाएँ सुचारु रूप से चलीं। प्रकाशन और बिक्री का यथेष्ट साधन पाकर आपने बहुत पुस्तकें लिखीं। आपकी रचानाएँ ये हैं :—

१ कविताकौमुदी ७ भाग, २ पथिक, ३ मिलन, ४ स्वप्न, ५ मानसी, ६ स्वप्न चित्र, ७ हिंदुस्तानी कोष, ८ जयंत, ९ प्रेमलोक, १० तरकस, ११ रामचरितमानस की टीका, १२ तुलसीदास और उनकी कविता २ भाग, १३ मारवाड़ के मनोहर गीत, १४ सुदामा-चरित, १५ पार्वतीमंगल, १६ घाघ और भड्डरी, १७ चिंतामणि, १८ हिंदी का संक्षिप्त इतिहास, १९ सुकविकौमुदी, २० कौन जागता है, २१ शिवाबावनी, २२ सोहर, २३ बाल कथा कहानी १७ भाग, २४ गुपचुप कहानियाँ २ भाग, २५ मोहन माला, २६ बताओ तो जानें, २७ बानर संगीत, २८ हँसू की हिम्मत, २९ नेता बुझौवल, ३० बुद्धि विनोद, ३१ पेखन, ३२ मोतीचूर के लड्डू,

३३ अशोक, ३४, चंद्रगुप्त, ३५ महात्मा बुद्ध, ३६ आल्हा, ३७ हिंदी ज्ञानोदय रीडर, ६ भाग, ३८ कन्याशिक्षावली रीडर, ६ भाग, ३९ हिंदी प्राइमर २ भाग, ४० हिंदी पत्र-शिक्षक, ४१ गाँव के घर।

आपकी पुस्तकों का हिंदी संसार में अच्छा मान हुआ। कई पुस्तकों के अनुवाद अन्य भाषाओं में हुए तथा कई पुस्तकें स्कूल-कालेज के कोर्स में हैं। 'स्वप्न' नामक कविता संग्रह पर हिंदुस्तानी एकेडेमी ने आपको ५०० रुपए का पुरस्कार दिया था। 'पथिक' नामक खंडकाव्य बर्लिन युनिवर्सिटी के कोर्स में है। सन् १९२५ के आस-पास आपने कविकौमुदी नाम का मासिक पत्र निकाला था जो एक साल चलकर बंद हो गया था। सुलतानपुर से 'उद्योग' नाम से एक पाक्षिक पत्र निकाला था। कुछ समय तक सम्मेलन पत्रिका का संपादन किया। सन् १९३१ से आपने 'बानर' का संपादन किया। सन् १९२५ से आपने ग्राम-गीतों का संग्रह किया और ग्राम-साहित्य पर अच्छा प्रकाश डाला। आपकी रुचि अनेक विषयों की ओर है।

आपमें विद्याप्रेम के अतिरिक्त और भी कई गुण हैं। आप एक अच्छे कुश्ती लड़नेवाले हैं। ३ वर्ष तक अपने गाँव में एक नट से कुश्ती लड़े। आप एक कुशल तैराक हैं। कई घंटे तक लगातार तैरने का अभ्यास है, भारत की प्राय: सभी बड़ी नदियों को आपने विनोदवश तैर कर पार किया है। आज कल आप बाग लगाने की ओर अधिक आकृष्ट हैं। आप एक अच्छे माली हैं। कुदार चलाने में आपको बड़ा आनंद मिलता है। साहित्यिक जीवन से अब आप विरक्त हो गए हैं और इससे अवसर ग्रहण करके फिर उन्हीं खेतों के किनारे चले गए जहाँ से चले थे। आप दिन में कभी नहीं सोते। प्रात: ५ बजे से लेकर रात ११ बजे तक १८ घंटे परिश्रम करते हैं। अब आप

अपने सब प्रकाशनों को 'सस्ता साहित्य मंडल' को सौंपकर ग्राम में बस गए हैं।

---

(२५) पंडित विश्वेश्वरनाथ रेउ साहित्याचार्य

रेउ जी के पूर्वज काश्मीर की राजधानी श्रीनगर के निवासी थे। आपके घराने में संस्कृत विद्या का प्रचार कई पीढ़ियों से चला आता है। फल-स्वरूप रेउ वंश में अनेक प्रकांड पंडित हुए। आपके प्रपितामह गोविंद भट्ट व्याकरण के और पितामह शंकर भट्ट तथा पिता मुकुंद मुरारि कर्मकांड के अच्छे विद्वान् थे। पं० मुकुंद मुरारि जी देशाटन और तीर्थयात्रा करते हुए सं० १९३५ में जोधपुर पहुँचे और कुछ मित्रों के आग्रह से वहीं बस गए। जोधपुर में ही आपका जन्म आषाढ़ शुक्ल १५ सं० १९४७ (जुलाई सन् १८९०) को हुआ।

पाँच वर्ष की अवस्था होने पर आपका विद्यारंभ करवाया गया। कुछ समय तक तो आप घर ही पर माता-पिता से पढ़ते रहे, किंतु आगे की पढ़ाई के लिये आपको वैदिक पाठशाला में प्रविष्ट कराया गया। उसी पाठशाला से आपने सं० १९६१ में पंजाब यूनिवर्सिटी की प्राज्ञ परीक्षा पास की। उसके दो वर्ष बाद आप विशारद की परीक्षा में सम्मिलित हुए, किंतु ठीक अवसर पर अस्वस्थ हो जाने के कारण उत्तीर्ण न हो सके। सं० १९६५ में आपने जयपुर से साहित्य विषय की शास्त्री परीक्षा पास की और अगले वर्ष साहित्य की आचार्य परीक्षा में सर्वप्रथम रहकर उत्तीर्ण हुए। संस्कृत की पढ़ाई के साथ-साथ घर पर अँगरेजी का अध्ययन भी चलता रहा। संस्कृत की पढ़ाई समाप्त होते-होते

अँगरेजी भी आपको काफी अच्छी हो गई थी। उसी बीच में आपने कुछ-कुछ उर्दू का भी अभ्यास कर लिया था।

सं० १९६७ में आप जोधपुर राज्य के इतिहास कार्यालय में लेखक नियुक्त हुए। उस समय डिंगल भाषा के गद्य तथा पद्य-मय साहित्य का संग्रह हो रहा था। उस समय आपने हस्तलिखित पुस्तकों में प्राप्त नामों की ऐसी सूची बनाई जिसे देख कर एशियाटिक सोसाइटी के उपाध्यक्ष महामहोपाध्याय पंडित हर-प्रसाद जी शास्त्री सी० आई० ई० बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने रेउ जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। इसके बाद आपने अजमेर जाकर राजपूताना म्यूजियम के अध्यक्ष राय बहादुर पं० गौरीशंकर जी ओझा से प्राचीन लिपियों का अभ्यास किया और वहाँ से लौटने के कुछ दिन बाद सं० १९७१ में जोधपुर अजायबघर के उपाध्यक्ष नियुक्त हुए। अजायबघर का सारा कार्य-भार तथा प्रबंध आप ही पर था। इस कार्य के साथ ही साथ एक वर्ष तक आप जोधपुर के जसवंत कालेज में संस्कृत प्रोफेसर का कार्य बड़ी योग्यता से करते रहे। आपके उद्योग से जोधपुर नरेश श्री सुमेर-सिंहजी के नाम पर एक सार्वजनिक पुस्तकालय की स्थापना हुई। सं० १९७३ में आप सर्दार म्यूजियम और सुमेर पब्लिक लाइब्रेरी के अध्यक्ष बना दिए गए। आपकी निम्नलिखित पुस्तकें हैं—

१. भारत के प्राचीन-राजवंश, ३ भाग, २ शैव-सुधाकर-टीका, ३ राजा भोज, ४ राष्ट्रकूटों का इतिहास, ५ मारवाड़ का इतिहास, २ भाग।

उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त आपने महाराजा मानसिंह जी द्वारा लिखित कृष्णविलास का तथा मारवाड़-नरेश महाराजा जसवंतसिंहजी प्रथम के रचे वेदांत के पाँच छोटे-छोटे ग्रंथों का वेदांत-पंचक के नाम से संपादन किया। आपने सैकड़ों ही ऐतिहासिक खोजपूर्ण निबंध लिखे जो कि बड़ी बड़ी संस्थाओं में पढ़े गए और उनको

विद्वानों ने प्रशंसा की। 'भारत के प्राचीन राजवंश' ने आपकी कीर्ति-पताका फहरा दी और आपको विद्वान् इतिहासकार की पदवी दिलाई। महाराजा बीकानेर ने आपको अपनी सेवा में लेने की इच्छा प्रकट की थी, किंतु आपने अपनी मातृभूमि मारवाड़ की सेवा को छोड़ना स्वीकार न किया।

सं० १९८८ में झाँसी में होनेवाले इक्कीसवें अखिल भारतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की इतिहास परिषद् के आप सभापति निर्वाचित किए गए थे। सं० १९९५ में भारत सरकार ने तीन वर्ष के लिये आपको इंडियन हिस्टोरिकल रेकर्ड्स कमीशन का करेस्पांडिंग मेंबर चुना था। आपके लिखे ग्रंथों की प्रशंसा देश-विदेश में सर्वत्र हो रही है। कई रियासतों ने तथा काशी की नागरीप्रचारिणी सभा ने आपको पुरस्कार तथा पदक देकर सम्मानित किया है। रेउ जी ने साहित्य-सेवा के साथ-साथ जनता की सेवा भी बहुत की है।

रेउ जी सरल-चित्त, नम्र और परिश्रमी सज्जन हैं। साथ ही साथ आपकी प्रकृति में स्वाधीनता भी भरी है। आपके लिखने का ढंग सरल है। आप जटिल से जटिल विषय को भी सुबोध बना देते हैं और अपने विचारों को पूरे तर्क के साथ पाठकों के सम्मुख रखते हैं। अपने अथक परिश्रम और अध्यवसाय द्वारा आपने भारत के पुरातत्त्वज्ञों में प्रमुख स्थान प्राप्त किया और राजस्थान का मुख उज्ज्वल किया।

— —

(२६) पंडित कृष्णबिहारी मिश्र बी० ए०, एल्-एल्० बी०

आपका जन्म श्रावण कृष्ण ६ सं० १९४७ में सीतापुर जिले (अवध) के गंधौली ग्राम में हुआ था। आपके पितृव्य श्री युगल-किशोर मिश्र 'ब्रजराज' तथा पिता श्री रसिकबिहारी मिश्र अच्छे साहित्यमर्मज्ञ थे। गंधौली में आपकी जमींदारी है। बाल्यकाल में आपकी शिक्षा-दीक्षा का समुचित प्रबंध हुआ। ७ वर्ष की आयु में आपको घर पर ही विद्यारंभ कराया गया। आपके प्रारंभिक शिक्षा-गुरु लखनऊ के सुप्रसिद्ध कांग्रेसनेता श्री हरप्रसाद जी सक्सेना हैं। अँगरेजी की शिक्षा उन्हीं के द्वारा प्रारंभ हुई।

सीतापुर के गवर्नमेंट हाईस्कूल से एंट्रेंस पास करके आप कैनिंग कालेज लखनऊ में प्रविष्ट हुए। वहीं से सन् १९१३ में आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। इसके पश्चात् संस्कृत में एम० ए० पास करने के विचार से अध्ययन आरंभ किया, किंतु आप उसमें उत्तीर्ण न हो सके। इस पहली असफलता से खिन्न होकर आप संस्कृत पढ़ना छोड़कर लॉ कालेज, प्रयाग में वकालत पढ़ने लगे। सन् १९१६ में आपने वकालत पास की और सीतापुर में अभ्यास करने लगे। यद्यपि वकालत आपको पसंद न थी, फिर भी १९१७ से १९२४ तक आप इसी कार्य को करते रहे, बीच बीच में सभा-सोसाइटियों में भी खूब भाग लेते थे।

विद्यार्थी-जीवन से ही आपने कालाकाँकर से निकलनेवाले 'सम्राट्' पत्र में लिखना आरंभ कर दिया था। धीरे धीरे 'मर्यादा', 'इंदु' और 'अभ्युदय' आदि में आपके लेख तथा कविताएँ निकलने लगीं। उसी समय आपने चीन का इतिहास लिखा और अपने पितामह श्री नंदकिशोर जी मिश्र 'लेखराज' द्वारा लिखित अलंकार ग्रंथ 'गंगाभरण' का संपादन किया। अंत में वकालत से ऊबकर

आप 'माधुरी' में काम करने चले गए। माधुरी में काम करते हुए भी आप एक स्वतंत्र पत्र 'साहित्य-समालोचक' निकाला जो पहले त्रैमासिक था, फिर द्वैमासिक हुआ। उक्त पत्र में साहित्य संबंधी अच्छे अच्छे लेख निकले थे और अनेक प्राचीन कवियों के अप्राप्य ग्रंथ भी प्रकाशित हुए, किंतु घाटा होते रहने के कारण अंत में उसे बंद कर देना पड़ा। इसके पूर्व काशी के 'आज' में भी आप कुछ दिनों तक कार्य कर चुके हैं।

सन् १९३४ में सीतामऊ राज्य के श्रीमान् राजा रामसिंह जी ने आपको अपने तथा अपने पूर्वजों के ग्रंथ संपादित करने के लिये आमंत्रित किया। राजा साहब स्वयं साहित्य-मर्मज्ञ तथा विद्या-व्यसनी हैं। राजकुमार रघुवीरसिंह जी ने तो इतिहास में डाक्ट्रेट की पदवी प्राप्त की है, अतः ऐसे वातावरण में आपका यथोचित आदर हुआ। 'नटनागर विनोद' तथा 'मोहन विनोद' का संपादन-कार्य समाप्त हो जाने पर राजा साहब ने अत्यंत सम्मान-पूर्वक आपको खिलत दी।

सन् १९३६ में मौरावाँ पुस्तकालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर, साहित्य-परिषद् के सभापति के आसन से आपने जो विद्वत्ता-पूर्ण भाषण दिया था, उससे विद्वत्-समाज अत्यंत प्रभावित हुआ था।

आजकल आपने साहित्यक्षेत्र से अवकाश सा ग्रहण कर लिया है। प्रायः अपने ग्राम में ही रहा करते हैं। स्पेशल मैजिस्ट्रेट हैं और उसका सब कार्य हिंदी में ही करते हैं। आपके लिखित तथा संपादित ग्रंथ ये हैं :—

मौलिक—१ चीन का इतिहास, २ देव और बिहारी।

संपादित—३ गंगाभरण, ४ नवरस तरंग, ५ मतिराम ग्रंथावली, ६ नटनागर विनोद, ७ मोहन विनोद।

——

(२७) बाबू ब्रजरत्नदास बी० ए०, एल्-एल० बी०

आपके पूर्वज इलाहाबाद जिले के शहज़ादपुर के निवासी थे। आपके पूर्वजों में से बा० छज्जमल जी सं० १७७८ में काशी आकर बस गए। आपके पिता का नाम बा० बलदेवदास था जिनसे भारतेंदु हरिश्चंद्र की पुत्री विद्यावती का ब्याह हुआ था। आपके पितामह का नाम बा० देवीप्रसाद था, जो सोने के प्रसिद्ध व्यापारी बा० बुलाकीदास के भतीजे थे। आपका जन्म काशी में भाद्रपद कृष्ण ८ सं० १९४७ में हुआ था। घर ही पर हिंदी, उर्दू, फारसी तथा अँगरेज़ी का कुछ अध्ययन करके बारह वर्ष की अवस्था में आप क्वींस कालेज में प्रविष्ट हुए। सं० १९६७ में स्कूल लीविंग तथा मैट्रिक परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए। उसी कालेज से आई० एस-सी० पास करके एक वर्ष तक बी० एस्-सी० में अध्ययन किया, किंतु स्वास्थ्य बिगड़ जाने से आपको कालेज छोड़ना पड़ा। तभी से आप हिंदी की सेवा में लग गए। ७-८ वर्षों तक अस्वस्थ रहने के पश्चात् जब आप स्वस्थ हुए तब बी० ए० की प्राइवेट परीक्षा देने के लिये हरिश्चंद्र हाईस्कूल में तीन वर्षों तक अवैतनिक अध्यापन-कार्य करते रहे। सं० १९८३ में प्रयाग-विश्वविद्यालय से आपने बी० ए० पास किया। सं० १९८६ में हिंदू-विश्वविद्यालय काशी से एल-एल० बी० पास करके वकालत करने लगे। इसी वर्ष आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। आपकी माता का देहावसान तो आपके बाल्यकाल में ही हो गया था।

लिखने की ओर आपकी रुचि बहुत पहले से थी। आप अपने छोटे मातुल स्व० बा० ब्रजचंद जी तथा स्व० पं० केदारनाथ पाठक से बहुत प्रभावित हुए और उनसे बराबर प्रोत्साहन पाते रहे। आपका प्रथम लेख चित्तौड़ का अंतिम शाका बा० ब्रजचंद जी ने संशोधित करके नागरी-प्रचारिणी सभा की पत्रिका में प्रकाशित कराया था।

आप सं० १९७७ से १९८० तक सभा के उपमंत्री, सं० १९८१ में मंत्री तथा १९९५ से १९९७ तक अर्थमंत्री रहे। प्रबंध-समिति के प्राय: बराबर सदस्य रहे और अब स्थायी सदस्य हो गये हैं। सभा की ७-८ पुस्तकें आपने बिना पारिश्रमिक लिए संपादित कर दी हैं और यथाशक्ति धन से भी आप सभा की बराबर सहायता करते रहते हैं।

कविता की ओर आपकी रुचि पहले से थी, किन्तु इस भ्रमात्मक उक्ति के कारण कि कवि प्राय: निस्संतान होते हैं, आपने इससे हाथ खींच लिया। आपके कई पुत्र जन्म लेकर जाते भी रहे, अत: आपका भ्रम और भी पुष्ट हो गया। फिर भी हिंदी-उर्दू में कुछ कविता कर लेते हैं, जिनका छोटा सा संग्रह अपने ही पास अप्रकाशित रख छोड़ा है। बा० गोपालचंद्रकृत जरासंध-वध का ग्यारहवाँ सर्ग आधा ही बन सका था, जिसे आपने इस कुशलता के साथ पूर्ण किया कि पता नहीं चलता कि इसमें दूसरे की भी कृति है। इतिहास की ओर आपका प्रेम बराबर रहा है और काव्य-ग्रंथों के संपादन में भी यह इतिहास-प्रेम बराबर काम करता रहा है। साहित्य-सेवा की ऐसी धुन थी कि वकालत ऐसे अतिव्यस्त कार्य से भी कुछ समय निकालकर कुछ साहित्य-सेवा कर लेते थे। आपको प्राचीन वस्तुओं तथा पुस्तकों के संग्रह का बड़ा शौक है। संस्कृत, हिंदी, उर्दू तथा फारसी के लगभग तीन सौ हस्तलिखित ग्रंथ आपने संग्रह किए हैं। चित्र तथा फोटो के कई एलबम एकत्र कर रखे हैं, तथा पत्र-पत्रिकाओं का भी अच्छा संग्रह है। आपके प्रकाशित ग्रंथ ये हैं :—

मौलिक ग्रंथ—१ सर हेनरी लारेंस, २ बादशाह हुमायूँ, ३ यशवंतसिंह तथा स्वातंत्र्य युद्ध, ४ हिंदी-साहित्य का इतिहास, ५ उर्दू-साहित्य का इतिहास, ६ भारतेंदु हरिश्चंद्र, ७ हिंदी-नाट्य-साहित्य, ८ खड़ी बोली हिंदी-साहित्य का इतिहास।

अनूदित ग्रंथ—९ हुमायूँनामा (फारसी), १० काव्यादर्श (संस्कृत), ११ मआसिरुलउमरा, २ भाग (फारसी)।

संपादित तथा संकलित—१२ खुसरो का हिंदी कविता, १३ प्रेमसागर, १४ तुलसी-ग्रंथावली, ३ भाग (संयुक्त), १५ रहिमन विलास, १६ संक्षिप्त रामस्वयंवर, १७ मुद्राराक्षस (भारतेंदु कृत), १८ भ्रमर-गीत, १९ भाषा-भूषण, २० जरासंध-वध महाकाव्य, २१ इंशाउल्ला खाँ, उनका काव्य तथा रानी केतकी की कहानी, २२ भूषण-ग्रंथावली, २३ सत्य-हरिश्चंद्र, २४ भारतेंदु-नाटकावली २ भाग, २५ भारतेंदु-सुधा।

इनके अतिरिक्त आपने अनेक जीवनियाँ, इतिहास-संबंधी लेख, साहित्यिक लेख तथा कहानियाँ लिखी हैं।

---

(२८) बाबू वृन्दावनलाल वर्मा बी० ए०, एल्-एल् बी०

आपका जन्म झाँसी जिले के मऊ रानीपुर ग्राम में सन् १८९० ई० में हुआ था। किसी समय आपके पूर्वज राज्य के दीवान थे, अतः कुटुंब की प्रतिष्ठा बहुत समय तक रही। आपने बी० ए० तक शिक्षा पाई है और वकालत की परीक्षा पास की है। इसके अतिरिक्त अपनी प्रतिभा के बल पर अद्भुत योग्यता प्राप्त कर ली है। पंद्रह वर्ष की अवस्था से ही आपने लिखना आरंभ कर दिया था। सन् १९०५ में एक उपन्यास तथा दो नाटक लिखे। सन् १९०६ में तीन नाटक लिखे। सन् १९०८ तक चार नाटक और लिख डाले। इसके पीछे निबंध आदि तथा अधूरे नाटक-उपन्यास लिखते रहे। सन् १९०८ ही में आपने बुद्ध का जीवनचरित लिखा था, जो आगरा के राजपूत प्रेस से प्रकाशित हुआ था। सन् १९०९ में कलकत्ते के भारतमित्र प्रेस से कुछ छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं।

आपके नाम से कोतवाल की करामात नामक उपन्यास निकला है, जिसकी एक पंक्ति भी आपकी लिखी नहीं है। वह आपके एक मित्र का लिखा उपन्यास था जिसको हिंदी आपने इधर-उधर ठीक कर दी थी, किंतु प्रकाशक ने आपका नाम छाप दिया था। आपका नाम छप जाने का एक और भी कारण था कि पांडुलिपि पर मित्र का नाम न था।

आपको कविता का भी कुछ शौक हुआ था, किंतु उस ओर अधिक नहीं रम सके और अंत में उस क्षेत्र को छोड़ ही दिया। बुंदेलखंड के प्राकृतिक दृश्यों, नदी-नाले, वन, झरने तथा ऐतिहासिक भग्नावशेषों ने ही आपमें एक अनोखी प्रेरणा भर दी और इसी कारण आप हिस्टोरिकल रोमांस बहुत अधिक पसंद करते हैं। आपके उपन्यास हमें राजपूतों के प्राचीन गौरव का स्मरण दिलाते हैं। आप घटनाओं के पिरोने में बड़े दक्ष हैं। कहीं से कथा उखड़ी हुई नहीं मालूम होती, वरन् क्रम से विस्तार होता चलता है। भाषा सरल और सुबोध होती है। आप एक अच्छे शिकारी भी हैं। एक बार दो बनैले सुअरों से बाल-बाल बच गए थे। क्षण भर की देर भी हिंदी-साहित्य से एक अच्छे उपन्यासकार को छीन ले जाती। अब तक आपकी प्रकाशित पुस्तकें ये हैं :—

उपन्यास—१ गढ़ कुंडार (१९२७), २ संगम (१९२७), ३ लगन (१९२८), ४ प्रत्यागत (१९२९), ५ कुंडली-चक्र (१९२९), ६ प्रेम की भेंट (१९३०), ७ विराटा की पद्मिनी, (१९३३)।

नाटक—८ धीरे धीरे (१९३७)।

(२९) पंडित विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'

आपका जन्म अंबाला छावनी में आश्विन कृष्ण १ सं० १९४८ को हुआ था। आप आदिगौड़ वंश के कौशिक-गोत्रीय ब्राह्मण हैं। आपके पूर्वज सहारनपुर जिले के गंगोह नामक कस्बे के निवासी थे। आपके पिता पं० हरिश्चंद्र कौशिक जीविकावश अंबाला चले गए थे। वहाँ वे फौज में स्टोरकीपर हो गए थे। वहीं आपका जन्म हुआ था।

आपके पिता के चाचा पं० इंद्रसेन जीविकावश कानपुर में आकर बस गए थे। यहाँ पर उन्होंने वकालत पास की और यहीं वकालत करने भी लगे थे। वे निस्संतान थे, अत: आपकी चार वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने आपको अपना दत्तक पुत्र बना लिया। इसी कारण आप अंबाले से कानपुर आ गए और तब से यहीं निवास करते हैं। यद्यपि गंगोह में अब भी पैतृक भूमि तथा मकान है, किंतु पिता पं० इंद्रसेन जी की उपार्जित जमींदारी तथा शहरी जायदाद के कारण आपको वहीं बस जाना पड़ा। अंबाला छावनी में भी आपके एक भाई रहते हैं। आप सब से छोटे भाई हैं।

आपने मैट्रिक तक शिक्षा पाई है। स्कूल में फारसी और उर्दू पढ़ी तथा घर पर प्राइवेट रूप से हिंदी और संस्कृत। आप पहले उर्दू में कविता किया करते थे; उपनाम साग़िब था। सन् १९०९ से आपका प्रेम हिंदी की ओर हुआ और उर्दू से विराग हुआ, फिर भी कभी कभी गद्यात्मक लेख उर्दू में लिख दिया करते थे। अंत में उसे भी छोड़ दिया। सन् १९११ से आप नियमित रूप से हिंदी की सेवा करने लगे। पहले पहल कानपुर के साप्ताहिक 'जीवन' में आपने कहानियाँ लिखीं। दो-तीन लेख 'सरस्वती' में छपे। एक बार आपकी भेंट पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी से हो

गई। उन्होंने पूछा, तुम्हारी रुचि किस ओर है? आपने उत्तर दिया, कहानी तथा उपन्यास की ओर। द्विवेदी जी ने इस पर कह दिया, तो वही लिखा करो। आप बँगला भी जानते थे, अतः द्विवेदी जी ने आपको षोडशी नामक कहानी-संग्रह दिया और कहा कि इसमें की एक कहानी का अनुवाद करके दो। आपने 'निशीथे' नामक कहानी का अनुवाद करके दिया। और अपनी इच्छा से 'रक्षाबंधन' नाम की मौलिक कहानी लिखकर दी। द्विवेदी जी ने उसे पसंद किया और 'सरस्वती' में छाप दिया। सन् १९१२ में यह आपकी पहली कहानी 'सरस्वती' में छपी थी। तब से बराबर आप मौलिक कहानियाँ लिखते रहे हैं, जिनका हिंदी-साहित्य में अच्छा स्थान है। अपनी कहानियों की उत्कृष्टता के कारण आप प्रेमचंद जी के साथ बृहत्त्रयी में रखे जाते हैं। कहानियों में आपके व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट रहती है। भाषा संयत तथा परिष्कृत, भाव कोमल तथा स्वाभाविक और शैली प्रभावोत्पादक रहती है। कहानियों के अतिरिक्त आपने दो उपन्यास 'माँ' और 'भिखारिणी' लिखे हैं, जिनके कारण कहानी-लेखक के साथ साथ सहज में ही आप अच्छे उपन्यासकार की कोटि में भी पहुँच जाते हैं। उपन्यासों में नारी-हृदय का चित्रण आपने अच्छा किया है। अब तक आपकी प्रकाशित पुस्तकें ये हैं :—

मौलिक कहानी-संग्रह—१ गल्प-मंदिर, २ कल्लोल, ३ चित्र-शाला २ भाग, ४ मणिमाला।

बँगला भाषा से अनूदित—५ मिलन-मंदिर, ६ अत्याचार का परिणाम (नाटक)।

संकलन—७ 'जारीना' (रूस की महारानी 'जारीना' का जीवनचरित), ८ रूस का राहु (रासपुटिन की जीवनी), ९ संसार की असभ्य जातियों की स्त्रियाँ।

मौलिक उपन्यास—१० माँ, ११ भिखारिणी।
चिट्ठियों का संग्रह—१२ दुबेजी की चिट्ठियाँ।

---

(३०) ठाकुर गोपालशरणसिंह

आपका जन्म पौष शुक्ल प्रतिपदा सं० १९४८ को रीवाँ राज्यांतर्गत नई गढ़ी में हुआ। आप सेंगर-वंशीय क्षत्रिय हैं। आपके पिता ठाकुर लाल जगतबहादुरसिंह बड़े दयालु, धर्मनिष्ठ तथा संस्कृत के विद्वान् थे। उन्होंने संस्कृत पाठशाला खोल रखी थी जिसमें शिक्षा के अतिरिक्त विद्यार्थियों को वस्त्र और भोजन भी मिलता था। आपके पितामह एक शूर क्षत्रिय थे, जिनकी शूरता की कुछ कथाएँ अब तक प्रसिद्ध हैं। रीवाँ राज्य में नई गढ़ी का इलाका बहुत प्रसिद्ध है। ठाकुर साहब उस इलाके के स्वामी हैं। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' के अनुसार बाल्यकाल ही से आपमें नैसर्गिक प्रतिभा थी। पिता जी के निरीक्षण में आपकी शिक्षा प्रारंभ हुई। हिंदी की साधारण योग्यता हो जाने पर आपको संस्कृत का अभ्यास कराया जाने लगा। कुछ ही समय में आपको संस्कृत का अच्छा ज्ञान हो गया। १३ वर्ष की अवस्था में आपने अँगरेजी पढ़ना आरंभ किया, किंतु उसी वर्ष आपके पिता का देहांत गया। २ वर्ष पीछे आप दरबार हाईस्कूल रीवाँ में प्रविष्ट हुए और सन् १९१० में मैट्रिकुलेशन की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। उसके बाद उच्च शिक्षा के लिये प्रयाग के म्योर सेंट्रल कालेज में प्रविष्ट हुए, किंतु कुछ कारणों से आपको दुःख के साथ कालेज छोड़ना पड़ा। फिर भी ज्ञान-पिपासा बनी रहने के कारण आप घर ही पर अभ्यास करते रहे और धीरे धीरे अनेक विषयों में योग्यता प्राप्त कर ली।

आपको बचपन से ही काव्य-प्रेम था किंतु पढ़ाई में लगे रहने के कारण १८ वर्ष की अवस्था तक कविता लिखने की ओर आपका ध्यान नहीं गया। सन् १९११ से आपका रचना-काल आरंभ होता है। एक-आध वर्ष तक आप ब्रजभाषा में स्फुट रचनाएँ करते रहे, किंतु सन् १९१२ से बोलचाल की भाषा में कविताएँ लिखने लगे, जो प्रायः सरस्वती में प्रकाशित होती थीं। आपकी रचनाओं में कवित्व की पर्याप्त मात्रा देखकर पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी बराबर कविता लिखते रहने के लिये आपको प्रोत्साहित करते रहे, और आप बराबर लिखते भी रहे।

सन् १९१६ में इलाके का प्रबंध आपके हाथ में आया, जिससे उसमें अधिक समय लगने के कारण कविता का लिखना स्थगित हो गया। और ५-६ वर्ष तक प्रायः स्थगित रहा, किंतु सन् १९२३ से फिर आप कविता लिखने लगे और तब से बराबर लिखते आ रहे हैं, जो प्रसिद्ध मासिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं। सरस होने के कारण आपकी कविताएँ विशेष लोकप्रिय हुईं और शीघ्र ही हिंदी-संसार में आपकी कविताओं की धूम मच गई।

सं० १९९२ में हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के साथ होनेवाले अखिल भारतवर्षीय कवि-सम्मेलन वृंदावन के आप सभापति थे और सन् १९३३ में प्रयाग के द्विवेदी मेला के आप स्वागताध्यक्ष थे। सन् १९३५ में मैसूर में होनेवाली ओरियेंटल कान्फरेन्स के अवसर पर अखिल भारतीय बहुभाषा-कवि-सम्मेलन के आप सभापति थे। सन् १९३० से आप हिंदुस्तानी एकेडेमी की कार्यकारिणी समिति के प्रमुख सदस्यों में से हैं। आप मध्यभारत हिंदी-साहित्य-समिति इंदौर के उपसभापति और रीवाँ की श्री रघुराज साहित्य-परिषद् के सभापति हैं।

आपकी कविताओं के पाँच संग्रह अभी तक प्रकाशित हो चुके हैं—

१ माधवी, २ कादंबिनी, ३ मानवी, ४ ज्योतिष्मती, ५ संचिता।

ठाकुर साहब का कविता-काल मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहला काल वह है जब खड़ी बोली का कविता अपने पैरों पर खड़ी होने का प्रयत्न कर रही थी। उस समय आप बाबू मैथिलीशरण गुप्त के ढंग की कविताएँ लिखते थे, जिनमें प्रसाद गुण अधिक मात्रा में पाया जाता था। वैसी कविताएँ ज्योतिष्मती और संचिता में संगृहीत हैं।

आपके रचना-काल का दूसरा भाग वह है जब आपने काव्य-जगत् में अपना एक अलग व्यक्तित्व स्थापित कर लिया। आपने मार्मिक उद्भावना और अभिव्यंजना की एक विशिष्ट शैली ग्रहण की थी। इस समय आपने प्रायः घनाक्षरी छंद लिखे हैं, जो माधवी में संगृहीत हैं।

आपके कवि-जीवन का तीसरा काल तब से आरंभ होता है जब से हिंदी में छायावाद और रहस्यवाद की कविताओं का महत्त्व बढ़ रहा था। इसी काल में आपके प्रसिद्ध ग्रंथ कादंबिनी और मानवी की रचना हुई। कादंबिनी में प्रकृति-सौंदर्य का चित्रण और मानवी में नारी-जीवन की अवस्थाओं का मार्मिक वर्णन है। आपकी सुमना और विश्वगीत नामक पुस्तकें अभी अप्रकाशित हैं।

ठाकुर साहब कोमल भावनाओं के कवि हैं। आपकी रचनाओं में प्रेम की प्रधानता है। वह प्रेम कहीं ईश्वर के प्रति है, कहीं संसार के प्रति और कहीं देश के प्रति। आपका प्रेम पवित्र प्रेम है और आपकी शृंगारिक रचनाओं में भी सुरुचि सर्वत्र पाई जाती है। आप सांसारिक सुख-दुःख से विशेष प्रभावित हुए हैं। आपकी अधिकांश रचनाएँ मनुष्य-जीवन से संबंध रखती हैं। आपके छोटे छोटे गीतों में पीड़ित आत्माओं का करुण स्वर

स्पष्ट सुनाई पड़ता है। दीन-दुखियों के संबंध में आपने बहुत सी कविताएँ लिखी हैं। मानवी में तो आदि से अंत तक नारी-हृदय का क्रंदन ही है। हिंदी के प्रमुख समीक्षकों ने आपकी कविताओं की प्रशंसा की है और भाषा तथा भावों के विकास की दृष्टि से नवीन-हिंदी-साहित्य में आपका विशेष स्थान माना है।

---

(३१) राय कृष्णदास

आपका जन्म सं० १९४९ में काशी के प्रतिष्ठित राय वंश में हुआ था। आपके पूर्वज शाही जमाने में राय की पदवी से भूषित थे। आपके पिता का नाम राय प्रह्लाददास था, जो संस्कृत और काव्य-साहित्य के बड़े प्रेमी थे।

आपकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई, तदनंतर स्कूलों में आपने शिक्षा पाई। आपमें काव्य-रुचि बचपन में ही उत्पन्न हो गई थी। आठ ही वर्ष की अवस्था में आपने कुछ छंदों की रचना की। आपके पिता के काव्य-प्रिय होने के कारण पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी और बाबू मैथिलीशरण गुप्त के संसर्ग का लाभ आपको प्राप्त हुआ। उन लोगों ने आपको साहित्य-क्षेत्र में उतरने की प्रेरणा की। हिंदी के ऐसे प्रतिष्ठित विद्वानों से प्रोत्साहित होकर आपने पद्य-रचना प्रारंभ की, जो समय समय पर 'सरस्वती' में प्रकाशित होती रही।

क्रमशः आप एक उत्कृष्ट गद्य-काव्य के लेखक के रूप में प्रकट हुए। आपके गद्य-काव्य बड़े भावपूर्ण होने लगे जिनकी हिंदी-संसार में पर्याप्त प्रशंसा हुई। गद्य-लेखन के साथ-साथ आप भावपूर्ण कविताएँ भी लिखते थे। इस प्रकार आप उत्कृष्ट गद्य-लेखक और काव्य-मर्मज्ञ के रूप में परिचित हुए। आपकी

रचनाओं में महाकवि रवींद्रनाथ ठाकुर का प्रभाव लक्षित होता है। आपकी कहानियों पर आपके मित्र हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री जयशंकर 'प्रसाद' की रचना-शैली की छाप है। आपके ग्रंथ ये हैं :—

गद्य-काव्य—१ साधना, २ छायापथ, ३ संलाप, ४ प्रवाल।

काव्य-ग्रंथ—५ भावुक, ६ ब्रजरज।

गल्प—७ अनाख्या, ८ सुधांशु।

कला-विषयक—९ भारतीय मूर्तिकला, १० भारतीय चित्रकला।

आप काव्यकार के अतिरिक्त एक ऊँचे कलाकार भी हैं। बचपन से ही चित्रकला आपको अत्यंत प्रिय थी। बड़े होने पर आपकी वह प्रकृति भारत-कला भवन के रूप में स्फुट हुई। आपके जीवन का यही सर्वश्रेष्ठ कार्य है। इस कलाभवन में राजपूत, मुगल तथा काँगड़ा शैलियों के लगभग एक हजार श्रेष्ठ चित्र हैं। चित्रों के अतिरिक्त हस्तलिखित ऐतिहासिक ग्रंथ, सोने चाँदी की बहुमूल्य वस्तुएँ, सिक्के, मूर्तियाँ तथा और अनेक अनोखी वस्तुएँ हैं। इस कलाभवन की उन्नति में आपने अपना बहुत सा धन लगाया है और इस समस्त संग्रह को काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के तत्त्वावधान में दे दिया है, जिससे सर्वसाधारण सुगमता से उसे देख सकें और उससे लाभ उठा सकें। हिंदी के साहित्यिकों में ललित कलाओं के आप एक मुख्य पारखी, ज्ञाता और प्रचारक हैं।

आपके साहित्यिक विचार बहुत सरल और सात्त्विक हैं। उक्ति-वैचित्र्य के भी आप प्रेमी हैं। आपही की प्रेरणा से द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रंथ तैयार हुआ और द्विवेदी जी को अर्पित किया गया। आपने हिंदी की उत्तम पुस्तकों के प्रकाशन के लिये भारती-भंडार नाम की पुस्तक-प्रकाशन-संस्था स्थापित की थी जिसने हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वानों के ग्रंथ प्रकाशित किए हैं। यह संस्था आजकल

'लीडर प्रेस' के हाथ में है। आप गंभीर, भावुक तथा सहृदय व्यक्ति हैं।

---

(३२) बाबू शिवपूजनसहाय

आपका जन्म जिला शाहाबाद के उनवास नामक ग्राम में श्रावण कृष्ण त्रयोदशी सं० १९५० को हुआ। आपके पितामह का नाम श्री देवीदयालदास तथा पिता का नाम श्री वागीश्वरीदयाल था। आप श्रीवास्तव कायस्थ हैं। आपकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव के एक गुरुद्वारा में हुई। फिर एक मौलवी साहब के मदरसे में आप को उर्दू-फारसी की शिक्षा मिली। सन् १९०३ में आप आरा नगर के कायस्थ जुबिली एकेडेमी के सातवें दर्जे में (इधर का थर्ड क्लास) भरती हुए। वहीं से सन् १९१२ में आपने मैट्रिक परीक्षा पास की।

मैट्रिक पास कर चुकने पर सन् १९१३ में आपने बनारस की दीवानी अदालत में नकल-नवीसी की नौकरी कर ली, किंतु एक ही वर्ष बाद आप नौकरी छोड़कर प्रयाग चले गए। प्रयाग में आरा-निवासी कुमार देवेंद्रप्रसाद जैन के साथ रहकर आप पुस्तकें लिखने लगे। वहीं अरंडेल साहब के 'Way to service' का हिंदी अनुवाद 'सेवा-धर्म' नाम से किया। वहीं पर प्रेम-पुष्पांजलि, प्रेमकली, त्रिवेणी आदि पुस्तकों का आपने संकलन किया। प्रयाग से आप पंडित रामदहिन जी मिश्र काव्यतीर्थ के यहाँ पटना चले गए, जहाँ पर 'बिहार का विहार' और 'हिंदी ट्रांसलेशन' नामक पुस्तकें लिखीं। जब आप आठवीं कक्षा में पढ़ते थे तभी से आरा-नागरीप्रचारिणी सभा में आने जाने लगे थे। फल-स्वरूप पंडित सकलनारायण पांडेय, बाबू ब्रजनंदनसहाय, उनके पिता बाबू

शिवनंदनसहाय तथा पंडित ईश्वरीप्रसाद शर्मा के संसर्ग का आपको अवसर मिला और हिंदी लिखने की रुचि हुई। पंडित सकलनारायण पांडेय द्वारा संपादित 'शिक्षा' में आप लिखने लगे। समयानुसार आप लक्ष्मी, मनोरंजन और पाटलिपुत्र इत्यादि पत्रों में लेख लिखते रहे। पंडित ईश्वरीप्रसाद आपके साहित्य-गुरु थे, उन्हीं से आपने कुछ संपादन-कला भी सीखी थी।

सन् १६१६ में आप आरा नगर के कायस्थ जुबली एकेडेमी में हिंदी-शिक्षक नियुक्त हुए। सन् १९१८ में आप वहीं के टाउन स्कूल में चले गए। उस समय से आप आरा नागरीप्रचारिणी सभा की सेवा में लग गए और धीरे धीरे सहायक मंत्री, फिर संयुक्त मंत्री हो गए। सभा के पुस्तकालय से पुस्तकें ले लेकर पढ़ने से आपकी साहित्यिक अभिरुचि का अच्छा विकास हुआ। वहीं से पत्र-व्यवहार करने के कारण हिंदी के सुप्रसिद्ध विद्वानों से परिचय हुआ। इस प्रकार आपने हिंदी-जगत् में पदार्पण किया।

सन् १९२० में आपने असहयोग में भाग लिया और राष्ट्रीय विद्यालय में हिंदी-शिक्षक हो गए। उसके पश्चात् आपने मारवाड़ी सुधार नाम का मासिक पत्र निकाला, जिसके संबंध में आपने बहुत भ्रमण किया। सन् १९२१ में आपने अपने गाँव के मकान में अपने स्वर्गीय पिता के नाम पर श्री वागीश्वरी पुस्तकालय स्थापित किया, जिसमें पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं का बृहत् संग्रह है। सन् १९२३ में मारवाड़ी सुधार, मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के मुख-पत्र 'मारवाड़ी अग्रवाल' में मिल गया। अतः आप 'मतवाला' में चले गए और वहाँ बहुत परिश्रम किया। मतवाला के साथ आपने थोड़े दिनों के लिये मौजी, गोलमाल, आदर्श, उपन्यास-तरंग और समन्वय आदि पत्रों का संपादन किया।

सन् १९२५ के लगभग आप माधुरी के संपादकीय विभाग में लखनऊ चले गए, किंतु थोड़े ही दिनों में फिर मतवाला में लौट

गए। सन् १९२६ में लहेरिया सराय के पुस्तक-भंडार का साहित्यिक-कार्य संपादित करने आप काशी आए। सन् १९३० में आप 'गंगा' का संपादन करने सुलतानगंज गए किंतु साल भर वहाँ रहकर फिर काशी लौट आए। काशी में 'हंस' और 'जागरण' से संबंध रहा। जयशंकरप्रसाद जी और प्रेमचंद जी के संपर्क में आने से आपको अमित लाभ हुआ। आपने द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रंथ के संपादन का भी काम किया।

सन् १९३४ में काशी छोड़कर आप पुस्तकों का संपादन और 'बालक' की देख-रेख करने लहेरिया सराय गए। वहाँ आपने ज्योत्स्ना-साहित्य-समिति की स्थापना की। सन् १९३६ में आप राजेंद्र कालेज के हिंदी-प्रोफेसर नियुक्त हुए। इस प्रकार आपका अधिकांश जीवन पत्र-पत्रिकाओं के संपादन में बीता, फिर भी कलकत्ते में रहकर आपने कुछ पुस्तकें लिखी हैं, जो ये हैं:—

१ अर्जुन, २ भीष्म, ३ देहाती दुनिया, ४ महिला-महत्त्व (बाद को यही विभूति नाम से प्रकाशित हुआ), ५ सेवा-धर्म, (अनुवाद), ६ बिहार का विहार, ७ हिंदी ट्रांसलेशन।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अनेक ग्रंथों तथा पुस्तकों का संपादन किया और अनेक लेख लिखे। बिहार प्रादेशिक हिंदी-साहित्य-सम्मेलन का सत्रहवाँ अधिवेशन पटना में आपके सभा-पतित्व में हुआ था।

आपके पिता रामायण का बड़ा सुंदर अर्थ करते थे। उन्हीं से आपने रामायण पढ़ी और अपने बहनोई श्री कालिकाप्रसाद से महाभारत, रस-कुसुमाकर तथा रामचंद्रिका पढ़ी। इन्हीं ग्रंथों के पढ़ने से आपका अनुराग हिंदी की ओर हुआ। आपके क्रमशः तीन विवाह हुए, किंतु तीनों पत्नियों का देहांत हो गया। आपके दो पुत्र और दो कन्याएँ हैं।

—

(३३) बाबू सियारामशरण गुप्त

आपका जन्म भाद्रपद शुक्ल १५ सं० १९५२ को चिरगाँव, झाँसी में हुआ था। आप बाबू मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई हैं। अतः आपका भी वंश-परिचय उन्हीं की जीवनी में आ गया। आपने भी बहुत दिनों तक स्कूली शिक्षा नहीं पाई। आपके बड़े भाई की साहित्य-प्रियता का प्रभाव आप पर बहुत पड़ा और आपको कविता लिखने का शौक हुआ। अपने भावों को व्यक्त करने की आपकी शैली अलग ही है। आपकी भाषा शुद्ध तथा परिमार्जित होती है। वर्तमान हिंदी कवियों में आपका एक अलग स्थान है। आपने अपनी प्रतिभा को कई ओर लगाया है। आप गद्य भी अच्छा लिखते हैं। आपने सुन्दर उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं। आप एक सफल नाटककार भी हैं।

आपकी रचित पुस्तकें ये हैं :—

उपन्यास—१ गोद, २ नारी।

कहानी-संग्रह—३ अंतिम आकांक्षा, ४ मानुषी।

नाटक—५ पुण्य पर्व।

कविता—६ मौर्य-विजय, ७ दूर्वादल, ८ आत्मोत्सर्ग, ९ अनाथ, १० विषाद, ११ आर्द्रा, १२ पाथेय, १३ मृण्मयी, १४ बापू, १५ उन्मुक्त।

अतुकांत गीति-नाट्य—१६ निष्क्रिय प्रतिशोध, १७ कृष्णा-कुमारी, १८

निबंध—१९ झूठ सच।

आपके पिता सेठ श्री रामचरण जी गुप्त एक अच्छे कवि, संस्कृत के विद्वान् तथा धर्मालु वैष्णव थे। आप पर अपने पिता का अच्छा प्रभाव पड़ा है। पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा श्री गणेश-शंकर विद्यार्थी से भी आपको बहुत प्रोत्साहन मिला है। आपकी

पहली कविता सन् १९१० में काशी के इंदु पत्र में प्रकाशित हुई थी। धीरे धीरे सरस्वती में आप लिखने लगे और साहित्यानुराग उत्तरोत्तर बढ़ता गया। स्वाध्याय के बल पर आपने बँगला, अँगरेजी, संस्कृत, गुजराती तथा मराठी का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया है। आप सादगी-पसंद, सज्जन तथा स्वल्पभाषी हैं।

---

(३४) बाबू कृष्णदेवप्रसाद गौड़ एम० ए०, बी० टी०

आपका जन्म प्रबोधिनी एकादशी सं० १९५२ को काशी में हुआ था। आपके पिता बाबू जगदेवप्रसाद गौड़ यहीं जजी कचहरी में मुंसरिम थे। आपकी शिक्षा क्वींस कालेज से आरंभ हुई। जब आप सातवीं कक्षा में थे तभी आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। आपकी माता आपको पढ़ने के लिये प्रोत्साहित करती रहीं और उन्हीं के प्रयत्न तथा प्रेरणा से आपने पढ़ते पढ़ते प्रयाग विश्व-विद्यालय से अँगरेजी में तथा आगरा विश्वविद्यालय से राजनीति शास्त्र में एम० ए० पास किया। हिंदू विश्वविद्यालय से आपने बी० टी० पास किया। हिंदी साहित्यसम्मेलन की भी कई परीक्षाएँ गौरव सहित पास कीं। इस समय आप डी० ए० वी० कालेज काशी में अँगरेजी के अध्यापक हैं।

आपके पिता उर्दू तथा अँगरेजी पत्रों में कुछ लिखा करते थे। उन्हीं से लिखने की प्रवृत्ति आपको प्राप्त हुई। आपका पहला लेख, जब आप नवीं कक्षा में थे, 'लीडर' में छपा था। उसके पश्चात् आप सेंट्रल हिंदू कालेज मैगजीन में लिखा करते थे। जब हिंदी का आपने अध्ययन किया, तब हिंदी में लिखने लगे। स्वर्गीय श्री काशीप्रसाद जायसवाल के संपादकत्व में पटना से निकलनेवाले साप्ताहिक पत्र 'पाटलिपुत्र' में आपने लिखना आरंभ

किया। उस समय की अन्य पत्रिकाओं में भी आप लिखते थे। 'विज्ञान' में कई वैज्ञानिक लेख लिखे। उस समय आप गंभीर विषयों पर लिखा करते थे। किंतु डिकेंस, मार्क ट्वेन तथा अकबर की कृतियों का अध्ययन करने पर आपकी इच्छा हास्यमय रचनाएँ करने की हुई। तब से आप हास्य तथा व्यंगपूर्ण लेख और कविताएँ लिखते आ रहे हैं, जिनकी प्रशंसा जनता ने की। इनकी कहानियों और कविताओं की माँग निरंतर बनी रहती है।

सं० १९८७ में आपने हास्यरस-प्रधान 'भूत' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला, किंतु अच्छी ख्याति होने पर भी सहयोगियों में मतभेद होने के कारण वह बंद हो गया। फिर सं० १९९१ में 'ख़ुदा की राह पर' पाक्षिक पत्र निकाला। उसमें किसी मित्र ने एक लेख में व्यक्तिगत आक्षेप किया। संपादक होने के नाते आपके ऊपर उत्तरदायित्व आ पड़ा। मुकदमा चला, और आपने उससे संबंध तोड़ दिया। सं० १९९५ में आपने फिर तरंग नामक पाक्षिक पत्र निकाला, जिसे हिंदी-संसार ने बहुत पसंद किया, किंतु आर्थिक कठिनाइयों के कारण उसे बंद कर देना पड़ा। आपके समय में तीनों पत्र हास्य की ऊँची तथा अच्छी सामग्री देते रहे। हिंदी के हास्य-साहित्य के इतिहास में इन पत्रों का स्थान है। ५-६ वर्ष तक आप काशी से निकलनेवाले साप्ताहिक 'भारत-जीवन' के भी संपादक रहे। कई वर्ष तक हास्य तथा व्यंग की टिप्पणियाँ दैनिक आज में लिखते रहे।

आप सं० १९८५ से १९८७ तक हिंदी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग) के साहित्य-मंत्री थे। सं० १९९२ से १९९५ तक काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के प्रधान मंत्री थे। इस प्रकार लेखों के अतिरिक्त आपने हिंदी संस्थाओं में सक्रिय योग दिया। अपने काल में ही आपने सभा के कर्मचारियों को प्रोविडेंड फंड दिलाने की व्यवस्था की, जो अब तक चल रही है।

अभी तक आपने सवा सौ के लगभग कहानियाँ लिखी हैं। कहानियों का एक संग्रह 'बनारसी एक्का' नाम से प्रकाशित हुआ है। लगभग इतनी ही कविताएँ लिखी हैं। कविताओं का एक संग्रह बेढब की बहक नाम से निकला है। बेढब आपका उपनाम है। इसके अतिरिक्त आपकी पुस्तकें हैं, खड़ी बोली कविता का प्रगति, शिवाजी की जीवनी तथा साहित्य संचय (३ भाग)।

हास्य की विशिष्ट शैली द्वारा हिंदी-साहित्य में हास्य का वर्तमान स्वरूप देने के कारण साहित्य में आपका अच्छा स्थान है। आपका हास्य शिष्ट तथा व्यंग्यपूर्ण होता है। सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक कुरीतियों तथा त्रुटियों पर आपकी कहानियाँ गंभीरता लिए हुए बड़ी चुटीली होती हैं। आपकी हास्यरस की कविताएँ बड़ी मार्मिक तथा लोकप्रिय होती हैं।

---

(३५) पंडित जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी'

आपका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल ११ शनिवार सं० १९५२ को उन्नाव के अंतर्गत गंजमुरादाबाद में हुआ था। आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण आंकिन के मिश्र हैं। आपके पिता पं० रामचंद्र मिश्र बड़े कर्मकांडी ब्राह्मण थे। आपकी शिक्षा फारसी से आरंभ हुई। कुछ दिनों तक फारसी पढ़ने के बाद आप अपने गाँव के मदरसे में उर्दू पढ़ने के लिये बैठे। चौथे दर्जे तक उर्दू पढ़कर छोड़ दिया और अँगरेजी पढ़ने के लिये कानपुर गए। अँगरेजी भी आप सातवीं कक्षा से अधिक न पढ़ सके। अँगरेजी छोड़कर आप संस्कृत का अध्ययन करने लगे। सारस्वत समाप्त कर चंद्रिका के कुछ अंश पढ़े और फिर संस्कृत की शिक्षा भी समाप्त हो गई। इस प्रकार आपने थोड़े थोड़े दिन कई भाषाओं का अध्ययन किया। आपको

शिक्षा बहुत थोड़ी मिली किंतु आगे चलकर अपने परिश्रम से आपने संस्कृत, फारसी, बँगला और उर्दू का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया।

उपर्युक्त भिन्न भिन्न भाषाओं के साथ हिंदी तो आप स्वतः सीखते जाते थे और अब हिंदी के सिद्ध-कवि हो गए हैं। छंदज्ञान आपके चाचा पंडित फूलचंद मिश्र से हुआ। रीति के कुछ ग्रंथ पं० बेनीमाधव जी पांडेय से—जो संस्कृत, फारसी, उर्दू तथा अँगरेजी के धुरंधर विद्वान् थे—पढ़े। काव्यक्षेत्र में आपने पं० गयाप्रसाद जी शुक्ल 'सनेही' से बहुत कुछ सहायता ली।

आपके विषय में लोगों की धारणा है कि आप क्रांतिकारी दल के मुख्य स्तंभ रहे हैं। इसी संदेह पर आप जेल में डाल दिए गए थे और गाँधी-इर्विन समझौते के बाद भी आपको छुटकारा नहीं मिला था। आप साढ़े छः वर्ष तक जेल में रहे और चक्की, कोल्हू, गर्रा खींचने की यातनाएँ सहते रहे। अलीपुर सेंट्रल जेल में आपने पैंसठ दिन का उपवास करके सरकार से अपनी शर्तें पूरी कराई थीं। 'वर्तमान' पत्र का संचालन जब आप कर रहे थे उस समय भी पुलिस ने धावा मारकर कार्यालय से एक बम बरामद किया था, किंतु आप उस झपेटे से बच गए। एक अन्य व्यक्ति बंदी किया गया जो हाईकोर्ट से छूट गया था।

आपने उर्दू में भी अच्छी गजलें लिखी हैं, जिनमें देश-प्रेम और राष्ट्रीयता की झलक है। कई एक अवसरों पर आपने उसी समय और मुँहतोड़ उत्तर कविता में ही दिया है। आप बड़े ही विनोदप्रिय हैं। आपके भाव अंतरतम से निकलकर अंतरतम में ही प्रवेश करते हैं। चाहे कोई भी विषय हो, चाहे कोई भी रस हो, उसमें आप एक निजी विशेषता उत्पन्न कर देते हैं। आपकी भाषा अत्यंत परिमार्जित एवं मुहावरेदार होती है। आपके भाव उच्च तथा अनूठे होते हैं। कथनप्रणाली अत्यंत सरल

और अनुप्रास की अपूर्व छटा आपका विशेष गुण है। सवैया छंद लिखने में तो आप बड़े कुशल हैं। उसमें आप एक विचित्र नवीनता ला देते हैं। आप कट्टर देशभक्त हिंदू हैं। आपका किसी से विरोधी नहीं, किंतु जो राष्ट्रीयता का विरोधी है उसी के आप विरोधी हैं।

आपकी कविताओं के संग्रह-ग्रंथ कल्लोलिनी, वैकाली तथा मातृगीता हैं। आपके कई और ग्रंथ प्रकाशित होनेवाले हैं।

---

(३६) पंडित हरिप्रसाद द्विवेदी (वियोगी हरि)

आपका जन्म चैत्र शुक्ल रामनवमी सं० १९५३ में छत्रपुर राज्य में हुआ था। आपके पिता का नाम पंडित बलदेवप्रसाद द्विवेदी था। आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। आप छः मास के भी न हो पाए थे कि आपके पिता का देहांत हो गया। आपका पालन-पोषण ननिहाल में आपके नाना पंडित अच्छेलाल तिवारी के द्वारा हुआ। आपके नाना आपसे विशेष प्रेम करते थे।

आपकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही आठ वर्ष की अवस्था में हुई। उसके एक वर्ष पूर्व ही आप एक कुंडलिया बना चुके थे। हिंदी और संस्कृत की शिक्षा घर पर होने लगी। आरंभ ही से गो० तुलसीदास की विनय-पत्रिका तथा श्रीमद्भागवत से आपको विशेष प्रेम था। हिंदी की शिक्षा पाने के अनंतर आप छत्रपुर के हाईस्कूल में अँगरेजी पढ़ने के लिये भरती हुए और सन् १९१५ में मैट्रीकुलेशन परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। छात्रावस्था से ही आप एकांत-प्रिय हैं। खेल-कूद में भाग न लेते थे। स्कूल की पढ़ाई के बाद आपकी इच्छा दर्शन-शास्त्र पढ़ने की हुई। दर्शन के अध्ययन में आपके साथी श्री गुलाबराय जी एम० ए० तथा बाबू भोलानाथ

जी बी० ए० थे। उस समय आप अद्वैतवाद की ओर विशेष रूप से झुके थे। बाल्यकाल से ही छत्रपुर की महारानी श्रीमती कमलकुमारीदेवी आपको पुत्र की भाँति प्यार करती थीं। वे माध्व संप्रदाय की अनुयायिनी थीं। उनकी संगति में पड़कर आप अद्वैतवादी से द्वैतवादी हो गए।

लगभग १८ वर्ष की आयु में आपने प्रेमधर्म पर ३ पुस्तकें लिखीं। विवाह की चर्चा चलने पर आपने स्पष्ट रूप में अस्वीकार कर दिया और आजन्म अविवाहित रहने का प्रण किया। महारानी साहबा के साथ आप उत्तर भारत के तीर्थ करने को निकले। प्रयाग में बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन ने हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की सेवा के लिये आपको रोक लिया। अतएव प्रयाग में रहकर आप सम्मेलन-पत्रिका का संपादन करते रहे और उसी समय में संक्षिप्त सूरसागर का भी संपादन किया। वहीं पर तरंगिणी नामक एक सुंदर गद्य-काव्य की रचना की। बीच में महारानी साहबा के साथ फिर तीर्थाटन को चले गए। वहाँ से लौटने पर बँगला के शुकदेव के ढंग पर आपने खड़ी बोली में शुकदेव नामक खंड-काव्य लिखा। उसके अनंतर दक्षिण के तीर्थों में जाने के लिये महारानी साहबा के बुलाने पर आप उनके साथ गए। यात्रा से लौटते ही महारानी साहबा का देहांत हो गया जिससे आपके हृदय पर गहरा आघात हुआ। महारानी साहबा की, स्वर्ग जाते समय की, आज्ञा के अनुसार आपने प्रयाग में त्रिवेणी तट पर संन्यास ग्रहण कर लिया। संन्यास का नाम तो श्री हरितीर्थ है किंतु आपने महारानी साहबा के वियोग में अपना नाम सदा के लिये वियोगी हरि रख लिया।

चार वर्ष तक आप सम्मेलन-पत्रिका का संपादन करते रहे, और साथ साथ पुस्तकें भी लिखते रहे। देश-प्रेम में विह्वल होकर आपने राष्ट्रीय पुस्तकें भी लिखी हैं। आपने व्रजभाषा में वीर सतसई

लिखी है जिस पर आपको मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला है! यह धन आपने सम्मेलन को भेंट कर दिया था। आपकी लिखित तथा संपादित पुस्तकें ये हैं :—

१ प्रेम शतक, २ प्रेम पथिक, ३ प्रेमांजलि, ४ प्रेम-परिचय, ५ संक्षिप्त सूरसागर, ६ तरंगिणी, ७ शुकदेव, ८ श्री छद्मयोगिनी, ९ साहित्य-विहार, १० कवि-कीर्तन, ११ अनुराग-वाटिका, १२ ब्रज-माधुरी-सार, १३ चरखा-स्तोत्र, १४ महात्मा गांधी का आदर्श, १५ बढ़ते हो चलो, १६ चरखे की गूँज, १७ वकील की रामकहानी, १८ असहयोग-वीणा, १९ वीरवाणी, २० श्री गुरु-पुष्पांजलि, २१ वीर सतसई, २२ पगली, २३ मंदिर-प्रवेश, २४ विश्व-धर्म, २५ प्रबुद्ध यामुन, २६ बिहारी संग्रह, २७ सूर-पदावली, २८ वृत्त-चंद्रिका, २९ भजनमाला, ३० योगी अरविंद की दिव्यवाणी, ३१ बुद्धवाणी, ३२ संतवाणी, ३३ ठंडे छींटे, ३४ प्रेम-योग, ३५ गीता में भक्तियोग, ३६ भावना, ३७ प्रार्थना, ३८ अंतर्नाद, ३९ विनय-पत्रिका का टीका, ४० तुलसी-सूक्ति-सुधा, ४१ हिंदी-गद्य-रत्नावली, ४२ हिंदी-पद्य-रत्नावली, ४३ मीराबाई आदि का पद्य-संग्रह।

सन् १९३२ के नवंबर में आप हरिजन-सेवक-संघ में सम्मिलित हुए और 'हरिजन सेवक' पत्र के संपादक नियुक्त हुए। सन् १९३७ में आप गांधी-सेवा-संघ के सेवक सदस्य हुए, जिसका यह नियम है कि कोई भी सेवक सदस्य अपनी जीविका का दूसरा प्रबंध नहीं कर सकता। सन् १९३८ के मार्च से आप दिल्ली की हरिजन बस्ती की उद्योग शाला के व्यवस्थापक का काम बड़ी तत्परता से कर रहे हैं।

आप १५-२० वर्षों से प्रायः फल खाकर ही रहते हैं। आप प्राय: ब्रजभाषा में ही कविता किया करते हैं। खड़ी बोली भी आपको उर्दू-मिश्रित प्रिय है। संस्कृत और बँगला का भी आपको अच्छा ज्ञान है। आपकी कविता में भक्ति, प्रेम और विरह का अच्छा

समन्वय पाया जाता है। सन् १९३४ से आपने कविता से भी संन्यास ले लिया है और हरिजनों की सेवा में लगे हुए हैं।

---

(३७) पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

आपका जन्म माघ शुक्ल ११ सं० १९५३ को महिषादल राज्य मेदिनीपुर, बंगाल में हुआ। आपके पिता पंडित रामसहाय त्रिपाठी उक्त राज्य में नौकरी करते थे, अत: सपरिवार वहीं रहते थे। आपका पुराना घर उन्नाव जिले के गढ़ाकोला गाँव में है। जब आप स्कूल में पढ़ते थे तभी से कविता करने लगे थे। उस समय बँगला में कविता लिखते थे। ९ वर्ष की अवस्था में घर में साधारण हिंदी सिखाई गई। घरवालों को तुलसीकृत रामायण पढ़कर सुनाते थे। इसके फलस्वरूप ब्रजभाषा, अवधी और बैसवाड़ी से मिली तुकबन्दियाँ भी किया करते थे। प्रवेशिका की परीक्षा देने गए। उस समय पिता पर फ़ालिज का आक्रमण हुआ, इससे लौट आए। परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो सके। कुछ समय पीछे संस्कृत पढ़ना प्रारंभ किया। इस समय संस्कृत में भी कुछ रचनाएँ कीं। खड़ी बोली सबके अंत में अपने परिश्रम से सीखी। 'जुही की कली' खड़ी बोली में आपकी पहली रचना है। पहला लेख हिंदी और बँगला के संबंध में १९१९ ई० की सरस्वती में पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी के संपादन में निकला।

आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। गढ़ाकोला में ९ वर्ष की उम्र में यज्ञोपवीत और १३ वर्ष की उम्र में विवाह संस्कार किया गया। आपकी २२ वर्ष की अवस्था में पत्नी का स्वर्गवास हो गया। अब तक काव्य का बीज उगकर पौधे के रूप में आ गया था, कुछ

दार्शनिक संस्कार भी थे। आपने फिर विवाह नहीं किया। काव्य-साधना में लगे रहे। पिता के आप इकलौते पुत्र हैं। पिता की मृत्यु के बाद चल-अचल जो संपत्ति पाई थी, उसका अधिकांश परिवार के पालन-पोषण में व्यय कर दिया क्योंकि साहित्य में कोई आय वैसी नहीं थी, विरोध बहुत अधिक था। आपके दादाजाद बड़े भाई के चार लड़कों के पालन-पोषण का भार आप पर पड़ा था। एक लड़का और एक लड़की आपके भी थे। इस समय केवल लड़का है।

कलकत्ते में रहकर आपने परमहंस रामकृष्ण देव और स्वामी विवेकानंद जी के दार्शनिक विचारों का अध्ययन किया, जिससे आपके विचार भी गंभीर और प्रौढ़ हो गए। सं० १९७८ में सहायक के रूप से रहकर रामकृष्ण मिशन से निकलनेवाले समन्वय नामक मासिक पत्र का दो वर्ष तक बड़ी योग्यता से संपादन किया। एक वर्ष तक मतवाला के संपादकीय विभाग में रहे। समन्वय में आपके रहते समय स्वर्गीय बाबू महादेवप्रसाद सेठ आपकी रचनाओं से आकृष्ट हुए थे, और सेठ जी के मतवाला निकालने के उद्देश्यों में एक उद्देश्य आपको हिंदी में परिचित कराना भी था। उस समय आपकी रचनाएँ संपादक छापते नहीं थे। आपकी एक रचना प्रभा में और एक माधुरी में, मतवाला निकलने से पहले, छप चुकी है। खड़ी बोली में स्वच्छंद छंद का प्रवर्तन आपने ही किया है और बहुत सफलता पाई है। अब अनेक कवि इस छंद में लिखने लगे हैं। इसके अतिरिक्त मुक्त संगीत तथा सममात्रिक अनेक प्रकार के नए छंदों की सृष्टि आपने की है। आपकी कविता में पूर्व और पश्चिम का अच्छा मेल रहता है। आप अपनी शैली के निराले कवि हैं, अतः निराला उपनाम युक्तिसंगत ही है।

आपके ग्रंथ ये हैं:—

काव्य—१ परिमल, २ गीतिका, ३ तुलसीदास, ४ अनामिका, ५ कुकुरमुत्ता।

उपन्यास—६ अप्सरा, ७ अलका, ८ प्रभावती, ९ निरुपमा, १० चमेली (प्रेस में)।

कहानी-संग्रह—११ लिली, १२ सखी, १३ सुकुल की बीबी।

स्केच—१४ कुल्ली भाट, १५ बिल्लेसुर बकरिहा।

आलोचना निबंध-संग्रह—१६ प्रबंध-पद्म, १७ प्रबंध-प्रतिमा, १८ रवींद्र-कविता-कानन, १९ प्रबंध-परिचय।

व्याकरण—२० हिंदी बँगला शिक्षा।

स्फुट—२१ महाभारत, २२ राणा प्रताप, २३ भीष्म, २४ प्रह्लाद, २५ ध्रुव, २६ शकुंतला, और २७ रस अलंकार, अप्रकाशित।

अनुवाद—२८ श्रीरामकृष्ण-वचनामृत (चार भागों में), २९ परिव्राजक, ३० स्वामी विवेकानंद के भाषण, ३१ देवी चौधरानी, ३२ कपालकुण्डला, ३३ आनंद मठ, ३४ चंद्रशेखर, ३५ कृष्णकांत का विल, ३६ दुर्गेशनंदिनी, ३७ रजनी, ३८ युगलांगुलीय, ३९ राधा रानी, ४० तुलसीकृत रामायण की टीका, ४१ वात्स्यायन-कृत काम-सूत्र, ४२ गोविंददास पदावली पद्य में (अप्रकाशित)।

---

(३८) डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा, एम० ए०, डी० लिट० (पेरिस)

आपका जन्म ज्येष्ठ कृष्णा प्रतिपदा सोमवार सं० १९५४ को बरेली में हुआ था। आप कायस्थ सकसेना दूसरे हैं। आपके पिता का नाम श्री खानचंद तथा माता का नाम कमला देवी है। इनका मूल निवासस्थान शफरस जिला बरेली है, जहाँ अब भी घर तथा कुछ संपत्ति है और कुटुंब के लोग रहते हैं।

आपके पिता आर्य-समाजी विचार के थे, जिसका प्रभाव आपके विचारों तथा शिक्षा आदि पर विशेष रूप से पड़ा। हिंदी आपने अपनी माता से सीखी। आपकी शिक्षा संस्कृत से प्रारंभ की गई थी। कई वर्षों तक पुराने ढंग से संस्कृत, व्याकरण आदि पढ़ते रहे। स्कूली शिक्षा देहरादून के डी० ए० वी० स्कूल से आरंभ हुई। आपके पिता उन दिनों सरकारी नौकरी के सिल-सिले में लखनऊ में थे, अतः आप भी वहीं गए और अधिकांश स्कूल का जीवन वहीं कटा। सन् १९१४ में आपने क्वींस हाई-स्कूल लखनऊ से हिंदी में सम्मान के साथ स्कूल-लीविंग सर्टीफिकेट परीक्षा पास की। आगे की पढ़ाई के लिये आप इलाहाबाद गए और १९१६ में म्योर सेंट्रल कालेज से एफ० ए०, १९१८ में बी० ए० तथा १९२१ में संस्कृत लेकर एम० ए० पास किया। एम० ए० पास करने के बाद दो वर्ष तक आपको सरकारी डी० लिट० स्कालरशिप १००) रु० प्रतिमास मिलती रही। यह समय आपने व्रजभाषा पर खोज करने के लिये सामग्री एकत्र करने तथा भाषा-विज्ञान का अध्ययन करने में बिताया। सन् १९२२ में आपका विवाह हुआ और १९२४ में आप प्रयाग विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के लेक्चरर नियुक्त हुए। कई वर्ष तक आप विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के संचालन करने में तथा बी० ए०, एम० ए० के पाठ्यक्रम को क्रमबद्ध करने में लगे रहे। खोज का कार्य भी बराबर चलता रहा। सन् १९३४ में आप भाषा-शास्त्र तथा प्रयोगात्मक ध्वनि-विज्ञान (Experimental phonetics) के अध्ययन के लिये यूरोप गए और १९३५ में पेरिस युनिवर्सिटी से डी० लिट० की उपाधि प्राप्त की। युनिवर्सिटी के कार्य के संबंध में आपका संपर्क लाला सीताराम, रावराजा डा० श्यामबिहारी मिश्र तथा पं० रामचंद्र शुक्ल आदि विद्वानों से हुआ।

आपकी प्रमुख प्रकाशित रचनाएँ निम्नलिखित हैं :—

१ हिंदी राष्ट्र, २ अष्टछाप, ३ ग्रामीण हिंदी, ४ हिंदी भाषा का इतिहास, ५ हिंदी भाषा और लिपि, ६ ला लांग ब्रज, ७ ब्रजभाषा व्याकरण।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त यूरोप से लिखकर भेजे हुए आपके लेख भिन्न भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे हैं।

आपके साहित्यिक कार्य का मुख्य क्षेत्र भाषा-विज्ञान, हिंदी-भाषा का इतिहास, ब्रजभाषा का ऐतिहासिक और तुलनात्मक विवेचन तथा हिंदी-भाषियों की संस्कृति का अध्ययन रहा।

हिंदुस्तानी एकेडेमी तथा हिंदी-साहित्य-सम्मेलन से आपका घनिष्ठ संबंध रहा है। एकेडेमी की त्रैमासिक पत्रिका के संपादक-मंडल में आप प्रारंभ से हैं। सम्मेलन-पत्रिका का भी आपने एक वर्ष तक संपादन किया है। क्षणिक राजनीतिक उद्देश्यों की दृष्टि से असाहित्यिक लोगों के द्वारा हिंदी-भाषा, लिपि तथा शैली आदि के साथ खेल-खिलवाड़ करने के पक्ष में आप नहीं रहे। आवश्यकता पड़ने पर इस संबंध में हिंदी-भाषियों का ध्यान पत्र-पत्रिकाओं तथा व्याख्यानों के द्वारा यथासंभव आकर्षित करते रहे हैं। यों तो आप अपने को अपरिवर्तनवादी नहीं समझते, प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यक परिवर्तन तथा सुधार करने के पक्ष में हैं, किंतु आपका विचार है कि सोच-विचार कर और उचित पात्रों के द्वारा यह कार्य संपादित होना चाहिए।

आपका दृढ़ विश्वास है कि बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र देश आदि के समान जब तक हिंदीभाषी प्रदेश में भारतीयता को भावना के साथ-साथ प्रादेशिक व्यक्तित्व की भावना जागृत नहीं होती तब तक हिंदी-भाषा, साहित्य और संस्कृति का सुदृढ़ तथा स्थायी विकास नहीं हो सकेगा। हिंदी प्रदेश में प्रांतीय भाषा तथा लिपि की दृष्टि से आप केवल हिंदी और देवनागरी के प्रयोग के पक्षपाती हैं। द्वितीय भाषा तथा लिपि की दृष्टि से उर्दू आदि

अन्य भाषाएँ सिखलाने का प्रबंध स्कूलों में होना चाहिए, किंतु यह द्वितीय भाषा तथा लिपि अनिवार्य न हो। पद्य की अपेक्षा आपकी रुचि गद्य की ओर अधिक है। गद्य में ललित विषयों के ग्रंथों की रचना के साथ साथ उपयोगी विषयों के ग्रंथ निर्माण को राष्ट्रीय हित की दृष्टि से इस समय आप विशेष आवश्यक समझते हैं।

---

(३९) पंडित उदयशंकर भट्ट

आपका जन्म श्रावण शुक्ल ५ संवत् १९५४ में अपनी ननिहाल इटावा में हुआ था। आपका घर कर्णवास, जिला बुलंदशहर में है। आपके पूर्वजों के विषय में इतना ही ज्ञात हो सका है कि वे गुजरात प्रांत के चाणोद कन्याली के निवासी थे। किसी समय कर्णवास और उसके आस-पास के गाँव इनके पूर्वजों के अधिकार में थे। ये औदीच्य ब्राह्मण हैं। इनके पिता पंडित फतेहशंकर मेहता बंबई में नौकर थे। वहाँ से उनकी बदली अजमेर हो गई। पिता के पास अजमेर में ही भट्ट जी की शिक्षा प्रारंभ हुई। वहीं इनका यज्ञोपवीत हुआ और समस्त यजुर्वेद कंठ कराया गया। अजमेर में वे सरकारी स्कूल में अँगरेजी पढ़ते थे, किंतु बीच बीच में जब कभी घर आते तो संस्कृत पढ़ते थे। अंत में पिता के कहने पर ये घर पर संस्कृत पढ़ने लगे। कुछ दिनों के पश्चात् स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण इनके पिता नौकरी छोड़कर घर आ गए। कोई ऐसी स्थायी आय या संपत्ति न थी जिससे सुगमतापूर्वक निर्वाह होता। पूरा परिवार आर्थिक संकट में था। भट्ट जी कुछ दिनों तक अपने चाचा के पास बड़ौदा

में रहे, किंतु उनके भी चले आने पर शिक्षा का क्रम फिर भंग हो गया। आपके पिता जब कुछ स्वस्थ हुए तब नौकरी की खोज में सपरिवार एक मित्र के पास लाहौर चले गए। वहाँ उन्हें रेलवे दफ्तर में नौकरी मिल गई। नौकरी करते उन्हें दो दिन ही हुए थे कि भट्ट जी के चाचा का देहान्त हो गया, जिससे इनके पिता इन्हें लाहौर ही में छोड़ कर सपरिवार फिर कर्णवास चले गए।

इन्होंने लाहौर में रह कर मैट्रिक की परीक्षा पास की, खर्च की कमी के कारण आगे न पढ़ सके। इसके बाद आपकी माता का और फिर उसी वर्ष आपके पिता का भी देहांत हो गया। तब ये अपने भाई-बहनों के साथ नानी के यहाँ चले गए। किंतु वहाँ न रहकर भट्ट जी अकेले एक संबंधी के यहाँ हरिद्वार चले गए। उस समय वे बहुत उच्छृंखल थे। आवारों की तरह इधर-उधर घूमा करते थे। एक दिन इनके संबंधी ने भी जवाब दे दिया। पेट की ज्वाला में इनकी सारी उच्छृंखलता और आवारगी भस्म हो गई। पत्थर ढोने तक की मजदूरी की और क्षुधा शांत की। कुछ दिनों तक खोनचा लगाया। एक दिन इन्हें अपने जीवन पर बड़ी ग्लानि हुई अतः घाट की सीढ़ी पर बैठकर रोने लगे। दैवात् एक संन्यासी आए और इन्हें रोता देखकर अनेक प्रकार से सांत्वना दी तथा फिर से पढ़ने का आदेश किया। संन्यासी जी ने कहा कि बेटा, विद्या सबसे बड़ा बल है, उसी के सहारे मनुष्य संसार पर शासन करता है। तुम भी मनुष्य हो, उठो और विद्या प्राप्त करो। संन्यासी जी के उपदेश से ये अत्यंत प्रभावित हुए और हरिद्वार छोड़ कर विद्या प्राप्त करने के लिये चल पड़े। यथासमय इन्होंने काशी से साहित्याचार्य के दो खंड, कलकत्ता से काव्यतीर्थ और पंजाब से शास्त्री की परीक्षाएँ पास कीं। अँगरेजी भी बी० ए० तक पढ़ी।

पहले पहल आपने संस्कृत में लिखना आरंभ किया, किंतु शारदा-संपादक पं० चंद्रशेखर शास्त्री के अनुरोध से आप हिंदी में लिखने लगे। आपका सर्वप्रथम लेख 'सांख्य दर्शन के कर्ता' सरस्वती में निकला। उस लेख की प्रशंसा आचार्य द्विवेदी जी ने बहुत की और बराबर लिखते रहने को प्रोत्साहित किया। तब से समय-समय पर आपके लेख तथा कविताएँ निकलती रहीं। वास्तविक रूप में लिखना इन्होंने सन् १९२८ से आरंभ किया। ये उस समय लायलपुर खालसा कालेज में संस्कृत के अध्यापक थे। इनकी रचनाएँ क्रम से इस प्रकार हैं :—

१ तक्षशिला काव्य (काव्य), २ विक्रमादित्य (नाटक), ३ दाहर अथवा सिंध-पतन (नाटक), ४ राका (कविताओं का संग्रह), ५ अम्बा (नाटक), ६ सगर-विजय (नाटक), ७ मत्स्यगंधा (गीति-नाट्य), ८ विश्वामित्र (गीति-नाट्य), ९ कमला (नाटक), १० मानसी (खंडकाव्य), ११ विसर्जन (कविता-संग्रह), १२ अभिनव एकांकी नाटकों का संग्रह, १३ राधा (गीति-नाट्य), १४ अंतहीन अंत (नाटक)।

इसके अतिरिक्त गुमान कवि की कृष्णचंद्रिका का संपादन भी इन्होंने किया है। उपर्युक्त पुस्तकों में से बहुत सी पुस्तकें पटना, कलकत्ता, पंजाब, दिल्ली, राजपूताना, नागपुर तथा मद्रास के विद्यालयों में पढ़ाई जाती हैं।

स्वर्गीय पं० चंद्रशेखर शास्त्री तथा द्विवेदी जी के प्रोत्साहन से आप हिंदी-साहित्य की ओर अग्रसर हुए। आपकी दृष्टि में साहित्य का सब से बड़ा कार्य जीवन को उठाकर ऊँचा बनाना है। आपका विश्वास है कि हम जिस संस्कृति को अपनी नसों में, अपने ज्ञानतंतुओं में भरे चले आ रहे हैं, उसके पुराने होने पर भी, समय की आँधियों से उसके विशृंखल हो जाने पर भी, उसमें जो ज्ञान-साम्य है, सात्त्विक सुख है, कदाचित् एक बार उसे फिर

पाकर हमारी अभिनव संस्कृति एक प्रकार का स्थायित्व पा सके। आपको तक्षशिला के खंडहरों से एक अमिट प्रेरणा प्राप्त हुई है। उनमें भी आपको जीवन का एक अक्षय प्रकाश दिखाई पड़ता है। आप रोमांस चाहते हैं, किंतु सत्य और कलापूर्ण रोमांस, जीवन के अंग-प्रत्यंग में पैठा हुआ रसदार रोमांस। वियोग और दुःख के भीतर भी इन्हें तीव्र सुख का अनुभव होता है और कदाचित् इसी लिये इनकी प्रायः सभी रचनाएँ वियोगांत हैं।

---

(४०) पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

आपका जन्म सं० १९५४ में ग्वालियर राज्य के शुजालपुर ग्राम में हुआ था। आपने स्वयं लिखा है कि आपका जन्म उस बाड़े में हुआ जहाँ गाय-बछड़े इत्यादि बाँधे जाते थे। आपके पिता पं० जमनादास शर्मा एक निर्धन किंतु भगवद्भक्त ब्राह्मण थे। आपकी माता आपको गोद में लेकर अष्टछाप के पद गाया करती थीं। यह उस समय की बात है जब आप तीन या चार वर्ष के थे। आपके पिता कट्टर वैष्णव तथा श्रीमद्वल्लभाचार्य के अनुयायी थे। वे वैष्णवों के प्रसिद्ध तीर्थस्थान नाथद्वारा को सपरिवार चले गए। किंतु आपकी माता ने सोचा कि लड़के की शिक्षा वहाँ नहीं हो सकती। अतः वे आपको लेकर ग्वालियर राज्य के एक जिले शाजापुर चली आईं और वहाँ के स्कूल में आपको शिक्षा मिलने लगी।

शाजापुर में आपको सेठ भगवानदास जी झालानीका आश्रय मिला। शाजापुर में रहकर आपने मिडिल पास किया फिर अँगरेजी पढ़ने के लिये उज्जैन के माधव कालेज में नाम लिखाया।

सन् १९१६ में जब आप एंट्रेंस में थे, लखनऊ में कांग्रेस होनेवाली थी। कांग्रेस देखने का आपने निश्चय कर लिया। कांग्रेस के लिये लखनऊ की यह यात्रा आपकी उन्नति में बहुत सहायक हुई। वहाँ जाकर आपने पूज्य तिलक, श्री एनी बेसेंट और पं० माखनलाल चतुर्वेदी, श्री गणेशशंकर विद्यार्थी, बा० मैथिलीशरण गुप्त, पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी इत्यादि हिंदी के धुरंधर विद्वानों के दर्शन किए। श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के तो आप विशेष कृपापात्र बन गए।

माधव कालेज से एंट्रेंस पास करने के बाद आपने उच्च शिक्षा के लिये श्री गणेशशंकर जी के पास जाना उचित समझा। पिता जी तो कुछ खर्च दे नहीं सकते थे। अतः कुछ विद्यार्थी जी का तथा कुछ अपने ट्यूशन का भरोसा करके कानपुर के लिये चल पड़े। विद्यार्थी जी ने बड़े प्रेमपूर्वक आपको रखा और क्राइस्ट चर्च कालेज में भरती करा दिया। विद्यार्थी जी के संसर्ग से आपके विचारों में परिवर्तन होने लगा और देश-प्रेम का रंग चढ़ने लगा। आंदोलन शुरू होने पर आपने बी० ए० फाइनल से कालेज छोड़ दिया और पूर्ण रूप से श्री विद्यार्थी जी के साथ सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने लगे तथा प्रताप के संपादन में सहयोग देने लगे। कई वर्ष तक आपने प्रताप और प्रभा का संपादन किया। आंदोलन में भाग लेने के कारण आपको कई बार जेल भी जाना पड़ा।

पहले पहल आपकी संतू नाम की कहानी 'प्रतिभा' में निकली थी। धीरे धीरे आप राष्ट्रीय कविता करने लगे और आपने भाव तथा भाषा की विशेषता से अपना एक अलग स्थान बना लिया है। नवीन जी का सुंदर काव्य विस्मृता उर्मिला है। अभी तक आपकी कविताओं का कोई संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ। 'प्रताप' से आपका

अभिन्न संबंध है। कांग्रेस-कार्यकर्ता के नाते आप असहयोग आंदोलन में कई बार सक्रिय रूप से सम्मिलित हो चुके हैं।

——

(४१) बाबू सत्यजीवन वर्मा एम० ए०

बाबू सत्यजीवन वर्मा जन्म का सं० १९५५ में, नाना के घर, पुरानी बस्ती में हुआ था। इनके नाना सब डिप्टी इंसपेक्टर थे। वर्माजी के पूर्वजों का आदि स्थान गढ़ोमूज मोगलाना दिल्ली के पास था। लगभग दो-तीन सौ वर्ष पूर्व वे लोग वहाँ से आकर बस्ती की डुमरियागंज तहसील में बसे और देवीपार में अपनी जमींदारी स्थापित की। अवध के नवाबों के शासन-काल में वर्मा जी के पूर्वजों को चकलादार और कानूनगो का पद मिला था। उन लोगों ने काफी भूसम्पत्ति प्राप्त कर ली थी। देवीपार का उस समय विशेष महत्त्व था और उसके जमींदार कायस्थों का हाथ राजनीति-क्षेत्र में था। डुमरियागंज के राजा इन कायस्थ जमींदारों की सहायता की अपेक्षा रखते थे। वर्मा जी के पितामह ठाकुर ब्रजराजसिंह फारसी के अच्छे विद्वान् थे और इनके पिता श्री जगन्मोहन वर्मा हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान् और लेखक थे।

वर्मा जी की प्रारंभिक शिक्षा इनके गाँव देवीपार में ही एक मौलवी की देख रेख में प्रारंभ हुई। कुछ दिनों के अनंतर ये निकट के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मदरसे में भेजे गए और फिर बस्ती में अपने नाना के पास चले गए। वहीं से इन्होंने उर्दू की अपर प्राइमरी परीक्षा पास की। घर पर नाना से अँगरेजी और हिंदी पढ़ते थे। सन् १९१० में इनके पिता कायस्थ पाठशाला प्रयाग में नियुक्त हुए। उन्हीं के साथ ये प्रयाग गए और उक्त पाठशाला में छठें दर्जे में नाम लिखाया। इनके पिता हिंदीभक्त

होने के कारण अपने कुल में उर्दू-फारसी के स्थान पर हिंदी-संस्कृत का प्रचार करना चाहते थे। अतः इन्हें हिंदी संस्कृत लेने पर बाध्य किया। एक ही वर्ष बाद इनके पिता काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के कोष-विभाग में गए, जिससे इन्हें भी काशी जाना पड़ा। काशी जाकर इन्होंने हरिश्चंद्र स्कूल में नाम लिखाया। इन्हें एक स्कूल में जमकर पढ़ने का अवसर नहीं मिला। काशी से भी ये लखनऊ के कालीचरण हाईस्कूल में पढ़ने के लिये गए। वहीं से इन्होंने सन् १९१६ में मैट्रिक पास किया। पुनः काशी लौटकर क्वींस कालेज में भरती हुए और सन् १९१८ में इंटरमीडिएट पास किया। काशी विश्वविद्यालय खुलने पर आपने उसमें नाम लिखाया, किंतु बी० ए० पास करने के पहले ही असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर कालेज छोड़ दिया। दो तीन वर्ष तक कांग्रेस का कार्य किया।

बीच में जब आपने कालेज छोड़ दिया था, तब कुछ दिनों तक गांधी स्कूल में अध्यापकी का काम करते रहे। इनकी इच्छा हुई कि विद्यापीठ में चलकर पढ़ाएँ, किंतु बी० ए० पास न रहने के कारण इस उद्योग में सफलता न मिली, अतः आपने पुनः काशी-विश्वविद्यालय में नाम लिखाया और वहीं से सन् १९२४ में हिंदी लेकर एम० ए० पास किया।

एम० ए० पास करने के बाद आप बहुत दिनों तक रिसर्च स्कालर रहे और उसी बीच में बीसलदेवरासो तथा सूर रामायण का संपादन किया। आपके दो महत्त्वपूर्ण लेख हिंदी के कारक-चिह्न तथा आख्यानक काव्य प्रकाशित हुए। आपका उत्साह बराबर बढ़ता गया और अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं। आपकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं—

१ बीसलदेवरासो, २ सूर रामायण, ३ चित्रावली, ४ नयन, ५ मुरली-माधुरी, ६ प्रायश्चित्त (अनुवाद), ७ स्वप्नवासवदत्ता

(अनुवाद), ८ प्रेम की पराकाष्ठा, (अनुवाद), ९ मुनमुन (कहानियाँ), १० १९३५ का पति-निर्वाचन (प्रहसन), ११ एलबम (शब्द-चित्र), १२ विचित्र अनुभव (कहानियाँ), १३ लेखनी उठाने के पूर्व, १४ आकाश पर अधिकार, १५ प्रसिद्ध उड़ाके।

इन रचनाओं के अतिरिक्त आपने साहित्यिक कार्य भी बहुत से किए हैं। सन् १९३४ में हिंदी-लेखकों का संगठन करके हिंदी-लेखक-संघ की स्थापना की, और सन् १९३५ से संघ की ओर से लेखक नाम का हिंदी का लेखन-कला संबंधी पत्र निकाला। आरंभ में इनकी रुचि विशेष कर प्राचीन साहित्य की ओर थी। सन् १९३४ में पहले-पहल आपने गृहिणी नामक निबंध (शब्द-चित्र) लिखा जो भारती नामक मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुआ। संकोचवश आपने अपना नाम न देकर श्री भारतीय उपनाम से ही उसे छपवाया। इसके बाद एक वर्ष तक आप श्री भारतीय गुमनाम से ही लिखते रहे। जब इनके लेखों का जनता ने स्वागत किया तब इन्होंने अपना नाम प्रकट किया, किंतु अब भी आप श्री भारतीय के ही नाम से अधिक प्रसिद्ध हैं।

आपको हिंदी-साहित्य की ओर प्रवृत्त करने का अधिक श्रेय आपके पिता जी को है। उन्हीं के अनुरोध से इन्होंने उर्दू फारसी को छोड़ कर स्कूल में हिंदी और संस्कृत विषय लिए। इस समय आप हिंदुस्तानी एकेडेमी के कार्यालय के सुपरिंटेंडेंट हैं। एकेडेमी के काम से जो समय बचता है उसे ये हिंदी-साहित्य की सेवा में लगाते हैं। आपने अभी थोड़े दिन हुए 'दुनिया' नाम की एक सुंदर मासिक पत्रिका निकाली है। इसके लेख ज्ञानवर्धक तथा उच्च कोटि के, किंतु सर्वबोधगम्य भाषा में होते हैं।

डाक्टर पीतांबरदत्त
बड़थ्वाल

पंडित नन्ददुलारे
वाजपेयी

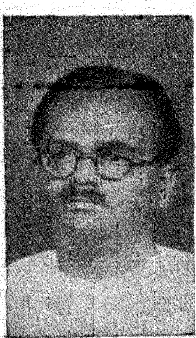

पंडित भगवतीप्रसाद
वाजपेयी

श्रीमती महादेवी वर्मा
एम० ए०

जगदंबाप्रसाद
'हितैषी'

(४२) पंडित भगवतीप्रसाद वाजपेयी

आपका जन्म आश्विन शुक्ल सप्तमी सं० १९५६ को कानपुर जिले के मंगलपुर गाँव में हुआ था। आपके पिता अपढ़ साधारण कृषक थे। किंतु आपके मामा संस्कृत भाषा के पंडित और कर्मकांड के आचार्य थे। आपके पिता अपनी ससुराल में बस गए थे। वहीं आपकी पढ़ाई मामा की अध्यक्षता में आरंभ हुई। मदरसे से पढ़कर आते तो मामा घर पर संस्कृत के श्लोक कंठाग्र कराते। आप जब सात वर्ष के हुए तभी मामा का स्वर्गवास हो गया। अतः कुछ दिन और पढ़कर मिडिल पास करने के बाद आपकी पढ़ाई बंद हो गई। अपने ही गाँव के प्राइमरी स्कूल में आप अध्यापक हो गए। किंतु उस लघु परिधि में रहना आपको पसंद न था। होम-रूल लीग के आंदोलन में भाग लेने के लिये आप कानपुर गए और वहाँ लीग की लायब्रेरी तथा रीडिंग रूम के अध्यक्ष हो गए। वहीं पर आपको हिंदी-साहित्य के अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ और वहीं से सन् १९१७ ई० से कुछ लिखने की ओर प्रेरणा हुई।

आरंभ में आप कविता लिखा करते थे, किंतु अनुभव के बाहुल्य ने आपको गद्य लिखने पर विवश किया। वेतन आपको केवल १५) रु० ही मिलता था, जिससे परिवार का पालन कठिनता से हो सकता था, अतः आय बढ़ाने के लिये लीग की पुस्तकों का गट्ठर बाँधकर इधर से उधर बेचने जाया करते थे। चार साल के अनंतर लीग टूट गई। आपने अपनी पत्नी के आभूषणों की पूँजी से एक स्वदेशी स्टोर खोला, जिसमें ६ महीने के बाद चोरी हो गई। उसके बाद कुछ दिनों तक आपने एक डिस्पेंसरी में कंपाउंडरी की और एक प्रेस में प्रूफ रीडरी। कुछ समय बाद कंपाउंडरी छोड़ दी और प्रेस से निकलनेवाले 'संसार' पत्र के

सहकारी संपादक हो गए, फिर मुख्य संपादक हुए। कुछ दिनों तक दैनिक विक्रम और माधुरी के संपादनविभाग में कार्य किया। उसके पश्चात् ४ वर्ष तक आप हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के सहायक मंत्री रहे। उससे ७ वर्ष बाद तक आपने प्रकाशन और पुस्तक-विक्रय का कार्य किया। इधर ५ वर्षों से आप स्वतंत्र रूप से लेखन-कार्य कर रहे हैं।

ग्यारह वर्ष के अल्प-वय में ही आपका विवाह हो गया था और १३ वर्ष की अवस्था से ही आप स्वावलंबी हो गए थे। फल-स्वरूप आपका स्वाध्याय-बल उतना पुष्ट नहीं है जितना जीवन की विविध धाराओं, स्थितियों तथा अनुभूतियों का है। पैसा भरे थैलों को कंधे पर रखकर देहात-देहात घूम फिरकर शराफी की, पुस्तकें बेचीं, लेक्चरबाजी की, गाँव में अवसर आने पर गाय भैंस बकरी चराई, खलिहान में काम किया, लगातार ५-५ मील तक मित्रों तथा आत्मीय जनों की महायात्रा पर तीन-तीन मन वजनी अर्थी को कंधा दिया, अतएव साहित्य को मुख्यतया पुस्तकों में न पाकर अपने सतत अवलोकन से पाया है।

आप बड़े भावुक हैं। अपनी एकमात्र दो वर्ष की प्यारी पुत्री के मरने पर आपने अपनी पत्नी से प्रस्ताव किया कि मैं राज़ी हूँ, तुम राज़ी हो तो चलो दोनों गंगा में डूब मरें; किंतु सौभाग्य से आपकी पत्नी ने अस्वीकार कर दिया। आप संस्कार-वश प्रकृति से आस्तिक होते हुए भी नाम-स्मरण या पूजा को पसंद नहीं करते। आप सत्य के, सौंदर्य के, पुजारी हैं। मधुर सत्य के ही नहीं, कटु सत्य के भी। साहित्य के कल्याण की दृष्टि से दलबंदी को आप संक्रामक रोग मानते हैं। इससे आपको बड़ा दुःख होता है। समालोचना के क्षेत्र में रचनाकारों पर जो अत्याचार हुआ है, उसका उत्तरदायित्व आप मासिक पत्रों के संपादकों पर रखते हैं। सबसे पहले आप टैगोर द्वारा प्रभावित

हुए। शरच्चंद्र से नारी-जीवन तथा रोमांस का अध्ययन करने में सुविधा पाई। विदेशी कलाकार डोस्टोवस्की, गोर्की और डी० एच० लारेंस के भी आप आभारी हैं। आपकी मुख्य पुस्तकें ये हैं।

उपन्यास —१ पिपासा, २ परित्यक्ता, ३ दो बहनें।

कहानी-संग्रह—४ पुष्करिणी, ५ खाली बोतल।

नाटक—६ छलना।

आलोचना —७ युगारंभ।

---

(४३) पंडित सुमित्रानंदन पंत

आपका जन्म ता० २४ मई सन् १९०० को कौसानी जिला अल्मोड़ा में हुआ था। आपके पिता पं० गंगादत्त पंत अत्यंत धर्मनिष्ठ और सदाचारी ब्राह्मण थे। वे कौसानी स्टेट के कोषाध्यक्ष और स्वयं भी जमींदार थे। जमींदारी का काम अब तक होता है। पंत जी चार भाई हैं। आप सबसे छोटे हैं।

आपकी आरंभिक शिक्षा गाँव के स्कूल में ७ वर्ष की अवस्था से आरंभ हुई। बारह वर्ष की आयु में आप अँगरेजी पढ़ने के लिये गवर्नमेंट स्कूल अल्मोड़ा में भरती हुए। कुछ दिनों बाद आप बनारस के जयनारायण हाई स्कूल में आकर पढ़ने लगे और वहीं से स्कूल-लीविंग की परीक्षा पास की। आगे की शिक्षा के लिये आपने प्रयाग के म्योर सेंट्रल कालेज में नाम लिखाया। किंतु सेकेंड इयर से पढ़ना छोड़ दिया। पढ़ना छोड़कर आप निश्चित रूप से घर पर रहने और पुस्तकावलोकन तथा कुछ कविता लिखने में समय व्यतीत करने लगे। अब तक आप अविवाहित हैं। आपका

काम कविता करना और सुख से विचरण करना है। आप प्राय: घर, प्रयाग तथा कालाकाँकर (अवध) में रहा करते हैं।

कविता की रुचि तथा शक्ति आपमें स्वाभाविक है। हिंदी पद्य-रचना को पढ़कर आपने छंदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। अब तो आप स्वयं नवीन छंद निर्माण करने का प्रयत्न किया करते हैं। कई शब्द भी आपने नवीन गढ़े हैं, जो काव्योपयोगी और सरस हैं। घर के ही अध्ययन से आपने संस्कृत और बँगला भी सीख ली है।

आपकी कविताएँ हिंदी में बिलकुल नवीन ढंग की होती हैं, जिनमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों की व्यंजना रहती है। कहीं कहीं पर तो कल्पना की इतनी ऊँची उड़ान रहती है कि अधिकांश पाठकों के लिये वह कविता शब्द-समूह के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होती। हिंदी-कविता में आपकी गणना नए युग के प्रवर्तकों में होती है। अंतस्तल के भावों तथा इंगित-संकेतों को मूर्त्तिमान् मानकर आप जैसी कल्पनाएँ करते हैं, उन्हें चाहे पुराने ढर्रे के कवि या साहित्यिक पसंद न करें, किंतु नवयुवकों के हृदय पर उनका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। आप बड़े ही प्रकृति-प्रिय हैं। प्रकृति-निरीक्षण आपका बड़ा सूक्ष्म है। छोटी सी बात भी आपकी दृष्टि से नहीं बचने पाती। केवल कविता तक ही नहीं, व्यावहारिक जीवन में भी प्रकृति के आप अनन्य पुजारी हैं। आपका अधिक समय कलकलनादी निर्झर अथवा सुरम्य वाटिका या रमणीक विपिनस्थली में ही बीतता है। आपके रचे काव्य-ग्रंथ ये हैं:—

१ उच्छ्वास, २ गुंजन, ३ ग्रंथि, ४ पल्लव, ५ वीणा, ६ ज्योत्स्ना, ७ युगांत, ८ युगवाणी, ९ हार (उपन्यास), १० पल्लविनी।

कालाकाँकर से निकले 'रूपाभ' नामक साहित्यिक मासिक का सम्पादन भी आपने किया है।

आपकी फुटकर कविताएँ भी समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में देखने को तथा कवि-सम्मेलनों में सुनने को मिलती हैं। आप अपने हृदय के कोमल भावों से बराबर हिंदी भांडार को भर रहे हैं। आप सरसहृदय, मधुरभाषी तथा सौंदर्योपासक हैं। आपके मुख से कविता सुनने में बड़ा आनंद आता है।

---

(४४) पंडित गांगेय नरोत्तम शास्त्री

आपका जन्म आश्विन शुक्ल सं० १९५७ में काशी में हुआ था। आप सारस्वत ब्राह्मण हैं। आपके पूर्वज जंबू के परमंडल नगरोहा ग्राम से काशी में आ बसे थे। आपके प्रपितामह का नाम पं० कर्मचंद्र शास्त्री, पितामह का पं० गोकुलचंद्र शास्त्री तथा पिता का नाम पं० कृष्णदयालु शास्त्री था। आपकी माता श्रीमती रामदेवी काशी के सुप्रसिद्ध पं० नारायण मिश्र की सुशिक्षित कन्या थीं। आपके पूर्वजों का जंबू राज में अच्छा सम्मान था। आपके पिता तथा पितामह विद्यानुरागी थे। इस प्रकार एक विद्वान् कुल में जन्म लेकर आपने विद्यानुराग का जन्मगत संस्कार प्राप्त किया।

आपकी अवस्था जब डेढ़ दो वर्ष की थी तभी एक दुःखपूर्ण घटना घटी। आपके पिता अपने परिवार के साथ वेदव्यास जी का दर्शन करने रामनगर गए थे। लौटते समय बीच धार में नाव डूब गई। आप मील डेढ़ मील तक बहते चले गए। माघ की कड़ाके की सर्दी में भी आपके शिशु-शरीर को कोई क्षति नहीं पहुँची। एक मल्लाह ने कपड़ा समझकर लोभवश पकड़ा। बच्चा देखकर वह प्रसन्न हुआ और निकाल लिया। गंगाजी से निकाले जाने के कारण ही आपका नाम गांगेय पड़ा। यह नाम

पं० शिवकुमार शास्त्री जी का दिया हुआ है। आप पर उनकी विशेष कृपा रहती था।

आपकी आरंभिक शिक्षा प्राचीन पद्धति के अनुसार गुरुजी के यहाँ प्रारंभ हुई। पहले कोष, व्याकरण तथा कुछ धार्मिक ग्रंथ पढ़ाए गए। तत्पश्चात् वेद कंठस्थ कराए गए। इनके कुल में परीक्षा देने का नियम नहीं था किंतु आपने स्वतंत्र रूप से अध्ययन करके कई परीक्षाएँ पास कीं। काव्यतीर्थ तथा व्याकरण की मध्यमा परीक्षा साथ साथ पास की। सन् १९१८ में लाहौर की शास्त्री परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। व्याकरणाचार्य के कई खंड पास करके छठे खंड की परीक्षा दे रहे थे, किंतु उसी समय असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर आपने परीक्षा देना स्थागित कर दिया। इस प्रकार आपने व्याकरण, न्याय, सांख्य, योग, मीमांसा, कर्मकांड, तंत्र, निरुक्त, साहित्य, वेद तथा वेदांत का स्वतंत्र रूप से अध्ययन किया। संस्कृत वाङ्मय के साथ साथ राष्ट्रभाषा हिंदी की ओर भी आपकी रुचि थी। अतः काशी नागरीप्रचारिणी सभा, कारमाइकल लाइब्रेरी तथा मालती शारदासदन में सहस्रों पुस्तकों को पढ़कर देश-विदेश के इतिहास, भूगोल, राजनीति, अर्थशास्त्र तथा पुरातत्त्व आदि विषयों का आपने अध्ययन किया। संस्कृत हिंदी पढ़ लेने के बाद आपने अँगरेजी तथा बँगला का भी कुछ ज्ञान प्राप्त किया।

अध्ययन के साथ साथ आपने कई संस्कृत पाठशालाओं में अध्यापन-कार्य भी किया। हिंदू-विश्वविद्यालय काशी में आपकी नियुक्ति हुई थी। कुछ दिनों तक अध्यापन कार्य करते रहे किंतु आंदोलन के अवसर पर आचार्य कृपलानी के साथ आपने भी त्याग-पत्र दे दिया। इसके बाद डाक्टर भगवानदास जी ने काशी विद्यापीठ में आपको अध्यापक नियुक्त किया। वहाँ कार्य करते हुए भी आपने आंदोलन में काफी भाग लिया। आपने ओजपूर्ण भाषणों से संस्कृत-विद्यार्थी-समाज में एक लहर उत्पन्न कर दी। आपने

असहयोग संस्कृत-छात्र-समिति की स्थापना को, जिसके आप सभापति थे।

आपमें कविता करने की रुचि बालपन से ही थी। समय पाकर आपने अपनी कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करानी आरंभ कीं। काशी विद्यापीठ से अनिश्चित काल के लिये छुट्टी लेकर आप कलकत्ते चले गए। वहाँ अनेक विद्वानों, पत्रकारों तथा रईसों से आपका परिचय हुआ। कलकत्ते के पं० विनायक मिश्र के घराने में आपका विवाह हुआ। ये सब कार्य करते हुए भी आप अपनी मातृभाषा हिंदी को नहीं भूले। सैकड़ों लेख तथा कविताएँ लिखीं और कई संस्थाओं का तन-मन-धन से यथाशक्ति सहायता दी।

हिंदी के विद्वान् पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र, पं० गोविंदनारायण मिश्र, आचार्य द्विवेदी जी, पं० पद्मसिंह शर्मा और पं० रामचंद्र शुक्ल की आप पर विशेष कृपा रहती थी। पं० पद्मसिंह शर्मा आपके यहाँ लगभग ४ मास रहे। वहीं पर उनकी 'पद्म-पराग' तथा 'प्रबंध-मंजरी' पुस्तकें निकलीं। कलकत्ते में श्री तुलसी पुण्य तिथि महोत्सव तथा विराट् परिहास-सम्मेलन आदि समारोहों का आयोजन आपने ही किया था। हिंदी-साहित्य-सम्मेलन को कलकत्ते के लिये निमंत्रण आपने ही दिया था, जिसके लिये आप महीनों दिन-रात परिश्रम करते रहे। आप बंगाल आयुर्वेदिक स्टेट फैकल्टी के रजिस्टर्ड कविराज भी हैं। आप रायल एशियाटिक सोसाइटी तथा काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के आजीवन सदस्य हैं। बंगीय साहित्यपरिषद्, संस्कृत साहित्यपरिषद्, इंडियन रिसर्च इंस्टीच्यूट, अखिल भारतीय संस्कृत-साहित्य-सम्मेलन आदि संस्थाओं से आपका स्नेह संबंध है। मद्रास हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर आप कवि-सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए थे। आपका हिंदी-प्रेम स्वभावतः तथा सत्य है। ये हिंदी को

संस्कृति-रक्षक, स्वराज्य-साधक शक्तिमयी मातृका समझते हैं। आपने विविध विषयों में पुस्तकें लिखी हैं जिनके नाम ये हैं:—

१ श्री रघुनाथस्तवराज (भक्ति-संवलित ललित रचना), २ गांगेयवाग्बाण (हिंदी गान और ४० कविताएँ), ३ प्रणय-पूरण (हिंदी उपन्यास), ४ अन्योक्ति-रत्नावली (अन्योक्तियाँ), ५ आचरण दर्शन, हिंदी, ६ श्रीकाशिराज पद्यपुष्पांजलि (संस्कृत हिंदी), ७ समस्यापूर्ति चंद्रिका (समस्या विषयक), ८ कर्म में धर्म (कर्मकांड संबंधी), ९ श्री संकटमोचन स्तवराज (भावुकता-पूर्ण काव्य), १० भारतीय महिलामहत्त्व, हिंदी, ११ वैश्य समाज, हिंदी, (सामाजिक निबंध), १२ गांगेय गद्यमाला (अनेक प्रकार के संस्कृत हिंदी के गद्य), १३ श्री काश्मीरेश-प्रशस्ति (ललित लघु काव्य), १४ स्पृश्यास्पृश्य-व्यवस्था (धर्मशास्त्र संबंधी निबंध), १५ भारतीयोद्‌बोधन (राष्ट्रीय कविताएँ), १६ अमन-सभा नाटक (हास्य-युक्त, नैतिक, स्वाधीनता-समर्थक), १७ गांगेय दोहावली (कोमल, कठोर, भव्य भावों से परिपूर्ण), १८ श्री वामन-विजय, नाटक, १९ निर्वेद वेदन, २० श्रीहनुमज्जन्म वर्णन (संस्कृत, नवरस युक्त, महाकाव्य), २१ साहस समालम्बन (वीररस प्रधान, विचित्र युद्ध-वर्णन), २२ सपण घोटक धावन, २३ श्रीतिलक स्तोत्र, हिंदी, (स्वातंत्र्यनीति-पूर्ण), २४ गांगेय गीत-गुच्छक (नवीन लयों में निर्मित गान), २५ आर्य साम्राज्य में नमक-कर (खोज पूर्ण निबंध), २६ वेदों में बिजली (वैज्ञानिक निबंध), २७ श्रीगंगा गुण माला, (द्रवित भक्तिमयी रचना), २८ श्री लंडन स्तोत्र, (प्रतिपद श्लेष कूटनीति हास), २९ भारतीय वायुयान (वैज्ञानिक), ३० ब्राह्मण सम्राट् पुष्यमित्र शुंग (ऐतिहासिक), ३१ गांगेय तरंग, हिंदी (हास्यरस पूर्ण छींटे), ३२ चारों वेदों में आयुर्वेद (वैद्यक विषयक), ३३ आत्मानंद (दार्शनिक रचना),

३४ करुणा-तरंगिणी, ३५ नूतन-निकुंज, हिंदी (नवरस युक्त, भव्य भाव संयुक्त काव्य)।

---

(४५) डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०, एल्० -एल० बी०, डी० लिट्०

आपका जन्म गढ़वाल के जहरखेल स्थान में २७ सौर मार्गशीर्ष सं० १९५८ में उत्तम ब्राह्मण कुल में हुआ। वंश-परंपरा के अनुसार घर ही पर आपने पहले संस्कृत का अभ्यास आरंभ किया। कुछ समय पीछे घर ही पर संस्कृत के साथ-साथ आपने हिंदी और अँगरेजी पढ़ना आरंभ किया। घर की थोड़ी बहुत पढ़ाई के अनंतर आप श्रीनगर गवर्नमेंट हाईस्कूल में भरती हुए किंतु बहुत दिनों तक वहाँ भी न पढ़ सके और कालीचरण हाई-स्कूल लखनऊ में पढ़ने लगे। कालीचरण हाईस्कूल से आपने एंट्रेंस पास किया और फिर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये डी० ए० वी० कालेज कानपुर में नाम लिखाया, जहाँ से आपने एफ० ए० परीक्षा पास की। आपकी रुचि और आगे पढ़ने की थी, अतः काशी विश्वविद्यालय में नाम लिखाया। काशी में आपको हिंदी तथा संस्कृत के विद्वानों के संपर्क में आने का अवसर प्राप्त हुआ। आप एक सुशील, विनम्र और योग्य विद्यार्थी थे। काशी-विश्वविद्यालय से आपने बी० ए०, एम० ए०, एल्-एल० बी० और डी० लिट० की परीक्षाएँ पास कीं। एम० ए० में संयुक्तप्रांत में प्रथम श्रेणी में पास होनेवाले आप पहले थे।

नागरीप्रचारिणी सभा काशी के खोजविभाग के निरीक्षक का कार्य कई वर्षों तक योग्यतापूर्वक किया। संत कवियों का अध्ययन आपने विशेष रूप से किया है।

सन् १९३१ में आप काशी विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने के लिये नियुक्त हुए और सन् १९३८ तक यह काम करते रहे। इतने समय में आपने अपनी योग्यता का पूर्ण परिचय दे दिया। आपका पठन-पाठन दोनों अबाध्य रूप से चलता रहा। आपने साहित्य की अच्छी सेवा की और हिंदी के श्रेष्ठ विद्वानों में आप की गणना होने लगी। सन् १९३८ में आप लखनऊ विश्वविद्यालय में हिंदी के अध्यापक नियुक्त हुए और तब से वहीं शिक्षण-कार्य कर रहे हैं। आपके रचे ग्रंथ ये हैं:—

१ निरगुन स्कूल आफ हिंदी पोइट्री (अँगरेजी), २ गोस्वामी तुलसीदास, और ३ रूपक-रहस्य (संयुक्त लेखक के रूप में)।

साहित्यिक निबंध—१ गाँधी और कबीर, २ हिंदी-साहित्य में उपासना का स्वरूप, ३ हिंदी-कविता में योग प्रवाह, ४ जायसी का अध्यात्मवाद और पद्मावत की कहानी, ५ संत, ६ नागार्जुन, ७ कठोरी पाव, ८ मीराबाई और वल्लभाचार्य, ९ आचार्य कवि केशवदास, १० गंगाबाई, ११ नाथ-पंथ में योग, १२ उत्तराखंड में संत-साहित्य, १३ निबंधकार द्विवेदी, १४ मीराबाई नाम, १५ कबीर और सिकंदर लोदी, १६ कबीर के कुल का निर्णय, १७ हरिश्चंद्र: एक नवीन रस की उद्भावना, १८ हिंदी काव्य की निरंजन धारा, १९ राघवानंद और सिद्धांत।

आप एक श्रेष्ठ निबंधकार हैं। आपके निबंध तर्कपूर्ण और न्याय-संगत होते हैं। आपके निबंधों में विवेचना की प्रधानता रहती है। आप इष्ट विषय की पूर्ण विवेचना करते हैं। थोड़े से ही आपको संतोष नहीं मिलता। विपक्षी की ओर से भी जो तर्क या प्रश्न हो सकते हैं, सब को रखकर फिर उनका समाधान करते हैं। आपकी रुचि कविता की ओर तो नहीं है किंतु कहीं कहीं पर आपकी भाषा में कविता का सा माधुर्य मिलता है। आप कमसे कम शब्दों में अधिक से अधिक भाव लाने का प्रयत्न

करते हैं किन्तु ऐसा करने में स्पष्टता का अभाव नहीं होने पाता। आपकी रुचि संत साहित्य की ओर अधिक है। आपकी शैली सरल तथा ओजपूर्ण है। आप तिरुपति में हुए दशम ओरियंटल कान्फरेंस के हिन्दी विभाग के सभापति नियत किए गए थे।

---

(४६) पंडित इलाचंद जोशी

आपका जन्म नवम्बर सन् १९०२ में अल्मोड़ा में हुआ था। आपके पिता का नाम पंडित बल्लभ जोशी था। आप मूलतः कान्य-कुब्ज ब्राह्मण द्विवेदी हैं। गोत्र उपमन्यु है। आपके पूर्वज कानपुर के पास जाजमऊ के रहनेवाले थे। वहाँ से वे लोग पहाड़ पर जा बसे थे। आपके पूर्वज ज्योतिष शास्त्र में विशेषज्ञ होने के कारण जोशी कहलाने लगे। तभी से उस उपाधि का प्रयोग बराबर आपके यहाँ होता आया है।

साहित्य और कला संबंधी प्रेम आपके वंश में परंपरा से चला आता है। आपके किन्हीं पूर्व पुरुष ने, जो कुमाऊँ के राजा के प्रधान मंत्री थे, प्रसिद्ध कवि भूषण को वहाँ बुलाया था। आपके पूर्वज कविता, संगीत, चित्रकला आदि ललित कलाओं के आचार्य थे। आपके पिता चारों कलाओं में पारंगत थे।

आपने केवल हाई-स्कूल तक शिक्षा प्राप्त की है। छोटी कक्षाओं में तो आप बहुधा प्रथम स्थान पाते रहे किन्तु एंट्रेंस तक पहुँचते-पहुँचते आप पर साहित्य-चर्चा का भूत इस तरह सवार हुआ कि प्रथम वर्ष में पास न हो सके। दूसरे वर्ष बड़ी कठिनाई से पास हुए। पढ़ने की सभी सुविधाएँ होते हुए भी आपने

आगे पढ़ना अस्वीकार कर दिया। घर ही पर आप विभिन्न विषयों का अध्ययन करते रहे।

आपके बड़े भाई डा० हेमचंद्र जोशी ने एक छोटी सी किन्तु विश्व-साहित्य की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की लाइब्रेरी बना रखी थी। एंट्रेंस पास करके आप ग्रंथकीट की भाँति उसी लाइब्रेरी में घुस पड़े और उसी के फलस्वरूप आपको प्रायः सभी आर्य भाषाओं का थोड़ा बहुत ज्ञान हो गया। अगरेजी के अतिरिक्त आपने फ्रेंच भाषा का भी अध्ययन किया है। उसमें इतिहास, दर्शन तथा विज्ञान संबंधी सभी प्रकार की पुस्तकें थीं। उन सबको पढ़ने के बाद आपको विश्वविद्यालय में न पढ़ने का खेद कभी नहीं हुआ।

आप बारह वर्ष की अवस्था में ही कविता लिखने लगे थे। सन् १९१५ में आपने सुधाकर नामक हस्तलिखित मासिक पत्रिका का संपादन तथा प्रकाशन किया। उसके दो एक-अंकों में पं० सुमित्रानंदन पंत की भी कविताएँ निकली थीं। बाद में उस पत्रिका का भार पंत जी तथा उनके एक मित्र को दे दिया। सन् १९१६ से आपकी कविताएँ प्रताप, मर्यादा आदि पत्रों में प्रकाशित होने लगीं। आपकी प्रारंभिक कविताएँ राष्ट्रीय प्रवृत्ति की थीं। सन् १९१९ से आपके लेख और कहानियाँ प्रभा तथा दो एक और पत्रों में निकलने लगीं। सन् १९२७ के बाद से सरस्वती तथा सुधा में प्रायः धारावाहिक रूप से आपकी कहानियाँ और कविताएँ प्रकाशित होती रहीं। उसी समय आपके साहित्य पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में चर्चा भी होने लगी। किसी में प्रशंसा थी तो किसी में निंदा, किसी में समालोचना तो किसी में व्यंग्य इत्यादि। उसी बीच आपने घृणामयी नाम का उपन्यास लिखा जो एक अच्छा यथार्थवादी और मनोवैज्ञानिक है।

पंडित जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी'

श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

भगवतीचरण वर्मा

पंडित उदयशंकर भट्ट

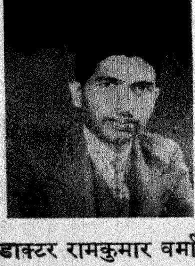
डाक्टर रामकुमार वर्मा

पंडित गांगेय नरोत्तम
शास्त्री

सन् १९२९ के अगस्त में माडर्न रिव्यू में आपका एक लेख Recent Hindi Literature शीर्षक निकला। कई पत्रों में इस पर टीका-टिप्पणी तथा स्वतंत्र आलोचना हुई। हिंदुस्थान रिव्यू ने इसे पुनर्मुद्रित किया। उक्त लेख में उस समय के दकियानूसी साहित्य की कड़ी आलोचना होने से कई हिंदी पत्रों को वह रुचिकर न लगा था। आपने कई पत्र-पत्रिकाओं का संपादन तथा उपसंपादन किया है। विश्वामित्र और विश्ववाणी में अपने भाई के साथ संयुक्त संपादक के रूप में थे। आपकी पुस्तकें ये हैं :—

उपन्यास—१ घृणामयी, २ संन्यासी, ३ चार उपन्यास, ४ धूपलता (कहानी), ५ विजनवती (कविता-संग्रह), ६ साहित्य-सर्जना (साहित्यिक निबंध), ७ दैनिक जीवन और मनोविज्ञान।

परदेशी नामक उपन्यास, जो अधिकांश माधुरी में निकल चुका है, तथा दो कहानी-संग्रह प्रकाशित होनेवाले हैं।

---

(४७) बाबू भगवतीचरण वर्मा

आपका जन्म उन्नाव जिले के शफीपुर ग्राम में, सं० १९६० में, हुआ था। आपके पिता बाबू देवीचरण वर्मा कानपुर में वकील थे। आप पाँच वर्ष के थे कि जब आपके पिता का देहांत हो गया, अतः आपके पालन-पोषण का भार आपकी माता पर पड़ा।

आपकी आरंभिक शिक्षा कानपुर में आर्य समाज स्कूल में हुई। उसके अनंतर आपने थियोसोफिकल स्कूल में शिक्षा पाई। स्कूल में पढ़ते समय ही आपकी रुचि हिंदी की ओर हुई थी। आपके अध्यापक हिंदी के श्रेष्ठ कवि श्री जगमोहन 'विकसित' ने आपको

बहुत उत्साहित किया। उसी समय से आपने पद्य-रचना आरंभ कर दी।

कानपुर से एफ० ए० पास करने के बाद आप प्रयाग विश्व-विद्यालय में भरती हुए और वहाँ से बी० ए०, एल्-एल० बी० की परीक्षा पास करके कानपुर जाकर वकालत करने लगे। सन् १९२० में आपके चाचा कालीचरण वर्मा का देहांत हो गया जिससे गृहस्थी का भार पूर्ण रूप से आप पर पड़ा।

विद्यार्थी-अवस्था से ही आपको संगीत से बड़ा प्रेम था, उसी संगीत-ज्ञान के बल पर आपने तुकबंदियाँ आरंभ की थीं, जो मात्रा के विचार से शुद्ध हुआ करती थीं। कानपुर में हुए हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अधिवेशन के अवसर पर आपने एकांत नाम की एक कविता सुनाई थी, जिसे सुन कर हिंदी के विद्वान् आकर्षित हुए थे। श्री रमाशंकर अवस्थी, पं० विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' तथा पं० चंद्रिकाप्रसाद मिश्र से आपको प्रोत्साहन मिला। श्री गणेशशंकर जी ने आपको विशेष उत्साहित किया और प्रताप में आपकी कविताएँ प्रकाशित कीं। आपकी रचनाएँ ये हैं:—

कविता—१ मधुकण, २ प्रेम-संगीत, ३ मानव।

उपन्यास—४ पतन, ५ चित्रलेखा, ६ तीन वर्ष।

कहानी संग्रह—७ इंस्टालमेंट, ८ दो बाँके।

---

(४८) श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

आपका जन्म श्रावण शुक्ल ५ सं० १९६१ को प्रयाग में हुआ था। आपके पिता का नाम ठाकुर रामनाथसिंह था। आपके बड़े भाई ठाकुर रामप्रसादसिंह पुलिस में सब-इंसपेक्टर थे किंतु असहयोग-आंदोलन से प्रभावित होकर आपने उस पद से इस्तीफा दे दिया।

आपके दूसरे भाई ठाकुर राजबहादुरसिंह बी० ए०, एल्-एल० बी० मध्यभारत के अजयगढ़ स्टेट में सेशन्स जज हैं।

आपकी शिक्षा प्रयाग के क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज में हुई। सं० १९७६ में आपका विवाह खंडवा-निवासी ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान के साथ हुआ। विवाह हो जाने के बाद भी आपका अध्ययन जारी रहा, किंतु कलकत्ते की कांग्रेस में असहयोग का प्रस्ताव पास हो जाने पर आपने स्कूल छोड़ दिया। उसी वर्ष आपके पति ने वकालत की परीक्षा पास की थी, किंतु आपके आग्रह से उन्होंने वकालत न करने का निश्चय कर लिया।

पिता ठाकुर रामनाथसिंह भजन गाने के बड़े प्रेमी थे। वे ईश्वर-संबंधी अच्छे अच्छे भजन गाया करते थे और बाल्यावस्था में आप उन्हें अत्यंत प्रेम से सुना करती थीं। भजनों को सुनकर आपके हृदय में भी तरंगें उठती थीं और आप कुछ गुनगुनाने लगती थीं। बचपन में आप नटखट भी बहुत थीं। अत: भय दिलाने के लिये लोग आपसे कहा करते थे गोगा आया, गोगा पकड़ लेगा इत्यादि। गोगा के नाम से लोग नित्य डरवाया करते थे किंतु आपको कभी गोगा दिखाई नहीं पड़ा। ठीक इसी प्रकार आपके पिता जी के सभी भजनों में ईश्वर-चर्चा रहती थी किंतु आपको ईश्वर कभी दिखाई नहीं पड़ा। गोगा और ईश्वर में बालिका को यह समानता दिखाई पड़ी कि लोग इनकी सत्ता निश्चित रूप में बतात हैं किंतु दोनों दिखाई नहीं पड़ते। अत: आपने झट एक तुकबंदी तैयार कर दी।

तुम बिन व्याकुल हैं सब लोगा,
तुम तो हो इस देश के गोगा।

छ: सात वर्ष की कन्या की यह प्रतिभा देखकर सब लोग चकित हो गए।

वकालत पास करके ठाकुर लक्ष्मणसिंह जबलपुर चले गए और पं० माखनलाल चतुर्वेदी के साथ कर्मवीर पत्र के संपादन तथा असहयोग आंदोलन में योग देने लगे। आप भी अपने पति के साथ जबलपुर गईं और राजनीतिक आंदोलन में भाग लेने लगीं, जिसके कारण आपको जेल भी जाना पड़ा।

आप मध्यप्रदेश की एसेम्बली की मेम्बर भी हैं। असहयोग आंदोलन शिथिल पड़ जाने पर आप फिर अपनी साहित्य-चर्चा में लग गईं। आपकी कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में निकलने लगीं और लोग बड़े चाव से उन्हें पढ़ने लगे। आपको सुशिक्षिता बनाने में आपके भाई ठाकुर राजबहादुरसिंह ने बहुत ध्यान दिया और वे बराबर आपको उत्साहित करते रहे।

हिंदी की स्त्री-कवियों में आपका नाम आदर के साथ लिया जाता है। आपकी कविता की भाषा शुद्ध तथा भाव सुन्दर होते हैं। अब तक आपकी प्रकाशित पुस्तकें ये हैं,—

१ मुकुल, २ बिखरे मोती, ३ त्रिधारा, ४ सभा का खेल, ५ उन्मादिनी।

---

(४९) डा० रामकुमार वर्मा एम० ए०, पी-एच० डी०

आपका जन्म मध्यप्रदेश के सागर जिले में १५ नवंबर सन् १९०५ को हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मीप्रसाद वर्मा डिप्टी कलेक्टर थे, अतः उन्हें सरकारी काम से विभिन्न स्थानों में घूमना पड़ता था। इसी कारण आपकी पढ़ाई मध्यप्रदेश के स्कूलों में हुई, विशेष कर रामटेक तथा नागपुर के मराठी स्कूलों में आपकी शिक्षा के चार वर्ष बीते।

हिंदी की शिक्षा आपको अपनी माता श्रीमती राजरानी देवी से मिली। वे तुलसी और मीरा के पद बड़े प्रेम से गाया करती थीं और प्रभातवेला में आपको जगाने के लिये 'भोर भयो जागहु रघुनंदन' का स्वर छेड़ती थीं। कविता के प्रति उनका जन्मजात प्रेम था और कुछ कविताएँ स्वयं भी लिखा करती थीं। उन्हीं की स्वर-लहरी में आपको कविता का स्पंदन मिला और उन्हीं के स्नेहांचल में आपको कविता का वरदान प्राप्त हुआ।

जब आप आठवीं कक्षा में पढ़ते थे, तब आपके गुरु श्री विश्वंभरप्रसाद जी गौतम विशारद 'विद्यार्थी' में अपनी कविताएँ प्रकाशित कराते थे। उस समय उन कविताओं की प्रतिलिपि करने का अवसर आपको प्राप्त होता था। प्रतिलिपि करते समय आप उन कविताओं को गा-गाकर पढ़ा करते थे। आपके बड़े भाई रघुवीरप्रसाद भी काव्य-रचना करते थे। जब वे अपनी कविताएँ पिता के पास भेजते तब आप उन्हें स्वर-विस्तार से पढ़ा करते थे। आपकी भिन्न परिस्थितियों की रेखाएँ काव्य के केंद्र-बिंदु पर ही एकत्रित होने के कारण आपके हृदय में कविता की प्रवृत्ति जगी और आपके काव्य-जीवन का प्रभात हुआ।

प्रारंभ से ही आप अध्ययनशील थे। हिंदी-साहित्य के प्रमुख कवियों की रचनाएँ आप नियमित रूप से पढ़ा करते थे। तुलसीदास जी आपके अत्यंत प्रिय कवि थे। उनके मानस का गुटका सोते समय भी बिस्तर पर रखा रहता था। कोई ग्रंथ निश्चित काल के भीतर समाप्त कर लेने पर माता से आप पुरस्कार पाया करते थे। इस प्रकार हिंदी-साहित्य की ओर आप और उत्साहित हुए। सन् १९२० में आपने हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की और तब से हिंदी-साहित्य आपके अध्ययन का विषय बन गया।

सन् १९२१ के असहयोग आंदोलन में आपने बड़े उत्साह से भाग लिया था। स्कूल छोड़ दिया था। उस समय आप एंट्रेंस में पढ़ते थे। पिता एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर थे। उन्होंने आपको बहुत समझाया किंतु ७२ घंटे का उपवास करके आपने अपने पक्ष का समर्थन किया और अपना व्रत स्वीकार कराया। प्रभातफेरी में राष्ट्रीय झंडे लेकर आप भारत माता के गीत गाते हुए सड़कों पर घूमते थे, दिन में खद्दर बेचते थे, शाम को सभा में व्याख्यान देते थे और रात में हिंदी-साहित्य का अध्ययन करते थे। यही आपकी दिनचर्या थी। प्रभातफेरी में नए-नए गीतों की आवश्यकता और हिंदी-साहित्य के प्रति प्रेम आपको कविता लिखने के लिये बार-बार प्रेरित करता था। अंत में यह प्रेरणा सफल भी हुई।

अभ्यास करते हुए प्रतिदिन आप कविता लिखने लगे। सन् १९२२ में देश-सेवा शीर्षक कविता पर आपको ५१ रु० का खन्ना पुरस्कार मिला। इस सफलता पर आपकी माता ने भी ५१ रु० का पुरस्कार दिया। आपने १० रु० के खद्दर के कुरते बनवाकर शेष रुपए कांग्रेस कमेटी को दे दिए। जब आप राबर्टसन कालेज जबलपुर में पढ़ते थे तब कालेज की पत्रिका नर्मदा में कृष्ण और प्रेम पर कविताएँ लिखते थे। फिर श्री सहगल के अनुरोध से 'चाँद' में भी कविताएँ भेजने लगे। सन् १९२५ में आप प्रयाग-विश्वविद्यालय में पढ़ने लगे। वहाँ से सन् १९२७ में बी० ए० और सन् १९२९ में हिंदी में एम० ए० प्रथम श्रेणी में पास किया। एम० ए० पास होने पर आप वहीं हिंदी-साहित्य के लेक्चरर नियुक्त किये गये। नागपुर-विश्वविद्यालय से आपको पी-एच० डी० की उपाधि मिली है।

सन् १९३५ में चित्ररेखा काव्य पर आपको २०००) रु० का देव पुरस्कार और १९३७ में चंद्रकिरण पर ५००) का चक्रधर

पुरस्कार मिला। वर्तमान हिंदी के रहस्यवादी कवियों में आपका अच्छा स्थान है। आपके ग्रंथ ये हैं :—

काव्य—१ अंजलि, २ रूपराशि, ३ चित्ररेखा, ४ चंद्र-किरण, ५ वीर हमीर, ६ चित्तौड़ की चिता, ७ अभिशाप, ८ निशीथ।

आलोचना—९ साहित्य-समालोचना, १० कबीर का रहस्य-वाद, ११ हिंदी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास।

गद्य-गीत—१२ हिम-हास।

नाटक—१३ पृथ्वीराज की आँखें, १४ रेशमी टाई।

संग्रह—१५ हिंदी गीति-काव्य, १६ कबीर पदावली, १७ जौहर, १८ आधुनिक हिंदी काव्य।

---

(५०) पंडित नंददुलारे वाजपेयी एम० ए०

आपका जन्म भाद्रपद कृष्ण १५ सं० १९६३ को उन्नाव जिले के मगरायल ग्राम में श्रेष्ठ कान्यकुब्ज ब्राह्मण-कुल में हुआ था। आपके पिता पहले खेतड़ी (राजपूताना) में हिंदी के अध्यापक थे। वहाँ से वे कलकत्ता गए और वहाँ की पिंजरापोल नामक गोशाला में मैनेजर नियुक्त हुए। यह एक बहुत बड़ी गोशाला है जिसमें हजारों की संख्या में गायें रहती हैं। उसकी एक शाखा बिहार प्रांत के हजारीबाग जिले में भी है। कुछ दिन बाद आपके पिता कलकत्ते से हजारीबाग गोशाला के प्रबंधक नियुक्त होकर चले गए। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य बड़ा मनोरम है, यहीं आपका आरंभिक जीवन व्यतीत हुआ। जन्म के डेढ़ वर्ष बाद ही आपकी माता का देहांत हो गया था।

आपकी शिक्षा घर ही पर हिंदी से आरंभ हुई। अँगरेजी की आरंभिक पुस्तकें भी घर ही पर पढ़ीं। सात वर्ष की अवस्था

में वहीं के मिशन कालेजिएट स्कूल में भर्ती किए गए। आप अपनी कक्षा के सबसे छोटे विद्यार्थी थे। उस स्कूल से आपने सन् १९२२ में एंट्रेंस की परीक्षा पास की और फिर सायंस लेकर एफ० ए० में पढ़ने लगे। किंतु इस विषय की ओर रुचि न होने से दूसरे वर्ष सायंस के स्थान पर आर्ट्‌स लेकर पढ़ना आरंभ किया। सन् १९२५ में आपने एफ० ए० पास किया। उसके अनंतर आप काशी विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिये आए। यहाँ से १९२७ में बी० ए० और १९२९ में हिंदी लेकर एम० ए० पास किया। बी० ए० में ये विश्वविद्यालय के प्रमुख छात्रों में थे और एम० ए० में अपनी श्रेणी के विद्यार्थियों में इनका प्रथम स्थान था। १९२९ से ३० तक ये मध्यकालीन हिंदी काव्य में अनुसंधान-कार्य करते रहे।

हिंदी की ओर इनकी रुचि स्कूल से ही थी। हजारीबाग में शुद्ध हिंदी बोलनेवालों की संख्या बहुत कम थी। विद्यार्थियों को भी शुद्ध हिंदी लिखना या बोलना नहीं आता था। स्कूल के प्रधान अध्यापक, जो क्रिश्चियन थे, देहली-निवासी होने के कारण शुद्ध हिंदी बोल लेते थे। उन्होंने आपको प्रोत्साहित किया। छोटे छोटे निबंध लिखकर आप उनको दिखाते थे। आपको प्राचीन काव्य का अर्थ समझने में अपने पिता से बहुत सहायता मिली। सरस्वती, मर्यादा, हिंदी-प्रदीप, आदि मासिक और भारतमित्र तथा स्वतंत्र आदि दैनिक पत्र आपके पिता मँगाते थे, जिन्हें आप बाल्यावस्था से ही पढ़ा करते थे। 'भारतमित्र' के अग्रलेखों को पढ़ते रहने से आपको उसी समय विदेशी शासन के प्रति अनास्था हो गई थी।

१९३० में आप 'भारत' पत्र के संपादक नियुक्त हुए। यह पत्र नम्र नीति का था, अतः पत्र के अधिकारियों से आपका मतैक्य नहीं हो सका। उक्त पत्र में रहकर आपने अनेक साहित्यिक

लेख लिखे; आधुनिक साहित्य की आलोचना आपका मुख्य विषय था। आपके निबंध नई शैली के, मनोवैज्ञानिक गंभीरता लिए होते थे और नवीन काव्यधारा पर नया प्रकाश डालते थे। १९३२ में 'भारत' का काम छोड़कर आप काशी आ गए। यहाँ नागरीप्रचारिणी सभा में सूरसागर का संपादन-कार्य, जिसे रत्नाकर जी अधूरा छोड़ गए थे, आरंभ किया। यह काम चार वर्षों में समाप्त हुआ। इसी अवसर पर संस्कृत तथा अँगरेजी के धार्मिक और दार्शनिक ग्रंथों का भी अध्ययन और मनन आपने किया। संस्कृत के अध्ययन की ओर आपकी रुचि पहले से ही थी।

१९३७ में आप गीता प्रेस, गोरखपुर चले गए। वहाँ रामचरितमानस का संपादन कार्य आपको दिया गया। वह कार्य दो वर्षों में पूरा हुआ। वहाँ मानस की प्राचीन प्रतियों के देखने और भाषा तथा व्याकरण संबंधी नियमों की शोध करने में आपका समय बीता। 'रामचरितमानस' के दार्शनिक आधार को लेकर एक बड़ा निबंध आपने लिखा जो अभी अप्रकाशित है। गीता प्रेस में रहकर भी 'कल्याण' पत्र की नीति के साथ आपका मतैक्य नहीं हो पाया। अपना मतभेद आपने आरंभ में ही प्रकट कर दिया था। किंतु रामचरितमानस के साहित्यिक कार्य के कारण दो वर्षों तक आप वहाँ रहे। १९३९ के अंत में गीता प्रेस छोड़कर प्रयाग चले गए।

१९४० में प्रयाग रहकर स्वतंत्र रूप से साहित्य-रचना का कार्य करते रहे। इसी वर्ष २९वें अखिल भारतीय हिंदी-साहित्य-सम्मेलन की साहित्य-परिषद् के सभापति निर्वाचित होकर पूना गए। उनके अध्यक्ष पद के भाषण का विषय था 'प्रगतिशील साहित्य', जिसकी प्रशंसात्मक चर्चा हिंदी के प्रमुख पत्रों में हुई।

सन् १९४१ की जुलाई से आप काशी-विश्वविद्यालय में हिंदी के अध्यापक हो गए हैं।

आपकी रचनाएँ निम्नांकित हैं :—

मौलिक—१ जयशंकर प्रसाद, २ हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी, ३ साहित्य : एक अनुशीलन, ४ तुलसीदास प्रबंध।

संपादित—५ सूरसागर (काशी-नागरीप्रचारिणी सभा), ६ रामचरितमानस (गीता प्रेस)।

संग्रह—७ हिंदी की श्रेष्ठ कहानियाँ, ८ हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास। ९ सूर-सुषमा, १० सूर-संदर्भ, ११ साहित्य-सुषमा।

अनुवाद—१२ धर्मों की एकता (डाक्टर भगवानदास की 'Essential Unity of all Religions' पुस्तक का अनुवाद)।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अनेक लेख और भूमिकाएँ लिखी हैं। श्रीजयशंकर प्रसाद की 'काव्य और कला', पं० सूर्यकांत त्रिपाठी की 'गीतिका', पं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी की 'खाली बोतल', 'अंचल' की 'अपराजिता', जानकीवल्लभ की 'रूप और अरूप' तथा गंगाप्रसाद की 'छायावाद और रहस्यवाद' आदि आधुनिक साहित्य की पुस्तकों की भूमिकाएँ आपकी लिखी हुई हैं। 'द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ' तथा 'रत्नाकर संग्रह' की प्रस्तावना भी आपने ही लिखी है। 'हिंदी भाषा और साहित्य' तथा 'साहित्यालोचन' के नवीन परिवर्धित संस्करण में आपने जो सहायता की है उसका उल्लेख उन सब ग्रंथों में किया गया है। इनके अतिरिक्त आपके दर्जनों लेख मासिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। इस नव युग के लेखकों में, जिन्होंने हिंदी-साहित्य के क्षेत्र में कार्य किया और यश पाया, आपका विशेष स्थान है। अँगरेजी के आलोचना साहित्य का आपने विशेष रूप से अनुशीलन किया है और उसके

उपयोग आप अपने साहित्यिक लेखों में करते हैं। आपमें स्वतंत्र उद्भावना और निर्माण की भी अच्छी शक्ति है। हिंदी के नवीन समीक्षकों में आपका प्रमुख स्थान है।

---

(५१) श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए०

आपका जन्म सं० १९६४ में फर्रुखाबाद में हुआ था। आपके पिता का नाम बाबू गोविंदप्रसाद वर्मा एम० ए०, एल्-एल० बी० तथा माता का श्रीमती हेमरानीदेवी है। आपके पिता अच्छे विद्वान् हैं और भागलपुर के कालेज में हेडमास्टर हैं, जहाँ से शीघ्र ही अवकाश ग्रहण करनेवाले हैं। आपके नाना ब्रजभाषा के अच्छे कवि तथा भक्त पुरुष थे। आपकी माता भी हिंदी की विदुषी और भक्त थीं। वे पद-रचना भी करती थीं। तुलसी, सूर और मीरा का साहित्य आपने अपनी माता से ही पढ़ा। आपका जन्म एक विद्वान् और भक्त परिवार में हुआ। आपके एक भाई श्री जगमोहन वर्मा एम० ए०, एल्०-एल० बी० तथा दूसरे श्री मनमोहन वर्मा एम० ए० हैं।

आपकी आरंभिक शिक्षा इंदौर में हुई। आपने वहाँ छठीं कक्षा तक पढ़ा। घर पर चित्रण, संगीत आदि की शिक्षा प्राप्त की। सं० १९७३ में आपका विवाह डा० स्वरूपनारायण वर्मा के साथ हुआ। सं० १९७७ में आप पढ़ने के लिये प्रयाग आईं और उसी वर्ष मिडिल की परीक्षा में प्रथम हुईं। सं० १९८१ में एंट्रेंस की परीक्षा में संयुक्तप्रांत भर में सर्वप्रथम पास हुईं। आपको आगे पढ़ने के लिये छात्रवृत्ति मिली। क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज से सं० १९८५ में बी० ए० परीक्षा सर्वप्रथम होकर पास की और फिर संस्कृत से एम० ए० पास किया।

बचपन से ही कविता की ओर आपकी रुचि थी। कुछ बड़ी होने पर अपनी माता के पदों में कुछ अपनी तरफ से जोड़ने लगी थीं। पहले आप ब्रजभाषा में कविता करती थीं, किंतु खड़ी बोली की कविता का आप पर बहुत प्रभाव पड़ा और आपने भी खड़ी बोली में रचना प्रारंभ कर दी। पहले आपकी रचनाएँ 'चाँद' में प्रकाशित होती थीं, किंतु धीरे धीरे अन्य पत्र-पत्रिकाओं—सुधा, माधुरी, मनोरमा इत्यादि—में भी निकलने लगीं। आप हृदय के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को मूर्तिमान् अंकित कर देने में बहुत सफल रहती हैं। आपकी कविताओं में मधुर वेदना की अनुभूति होती है। हिंदी-साहित्य के इस नवीन युग में आपका एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान है। समय समय पर आप अपनी रचनाओं के लिये पुरस्कृत होती रही हैं। मेरा जीवन नामक कविता पर आपको चाँदी का एक कप मिला है। नीरजा नामक काव्य ग्रंथ पर आपको ५००) रु० का सेकसरिया पारितोषिक मिला है। जिस वर्ष आपने एम० ए० पास किया उसी वर्ष प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रिंसिपल नियुक्त हुई। आपके कारण उक्त विद्यापीठ समस्त भारत की एक श्रेष्ठ शिक्षण-संस्था मानी जाने लगी है और आपकी लोकप्रियता के कारण दक्षिण भारत, आसाम तथा पंजाब तक की कन्याएँ उसमें शिक्षा प्राप्त करने आती हैं। आप कई वर्षों तक 'चाँद' की संपादिका भी रही हैं। आपके निर्मित ग्रंथ ये हैं,—

१ नीहार, २ रश्मि, ३ नीरजा, ४ सांध्य गीत, ५ दीपशिखा, ६ अतीत के चल चित्र।

———

हिन्दी-साहित्य-विभाग

अब तक प्रकाशित पुस्तकें

९—सूर-संदर्भ

१७—हिन्दी के निर्माता

२५—हिन्दी के वैष्णव कवि

६९—हिन्दी के निर्माता (भाग २)

मिलने का पता—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।